शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 12 अंक : 4 1 नवम्बर 2019

(कार्तिक-मार्गशीर्ष, विक्रम संवत् 2076)

संस्थापक
स्व. मुकुन्दराव कुलकर्णी

❖

परामर्श
के.नरहरि
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल
शिवानन्द सिन्दनकेरा

❖

सम्पादक
डॉ. राजेन्द्र शर्मा

❖

सह सम्पादक
भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक
डॉ. शिवशरण कौशिक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी : नौरंग सहाय
कार्यालय प्रभारी :
आलोक चतुर्वेदी : 8619935766

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राजस्थान) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/- वार्षिक शुल्क 200/-
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

भारतीय संगीत : विविध आयाम ❑ डॉ. शिवशरण कौशिक

भारत में शिक्षा के क्षेत्र में संगीत का महत्त्व और भी अधिक रहा है। विद्यार्थियों की सृजनात्मकता, आत्म-विश्लेषण की क्षमता, सूक्ष्म मनोभावों की अभिव्यक्ति तथा जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के निर्माण में संगीत का विशेष योगदान रहा है। इसीलिए वर्तमान शिक्षा पद्धति में मानविकी तथा विज्ञान के मूलभूत विषयों के साथ संगीत आदि ललित कलाओं को भी उल्लेखनीय रूप से स्थान दिया जाने लगा है।

5

अनुक्रम

4.	संपादकीय	- डॉ. राजेन्द्र शर्मा
8.	सेहत का मीत - संगीत	- श्रीमती भारती दशोरा
10.	ब्रह्मानन्द सहोदर : संगीत	- डॉ. रचना जोशी
12.	भारतीय समाज में संगीत का महत्त्व	- डॉ. सोमकान्त भोजक
14.	शिक्षा में संगीत के सकारात्मक प्रभाव	- बजरंग प्रसाद मजेजी
16.	मानसिक विकास व स्वास्थ्य का पोषक तत्त्व संगीत	- प्रो. मधुर मोहन रंगा
18.	कथक का आधार: आर्ष महाकाव्य	- पद्मजा रंगा
20.	भारतीय संगीत और पाश्चात्य संगीत	- श्रीमती दीप्ति चतुर्वेदी
22.	संस्कृत वाङ्मय में संगीत विज्ञान	- डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय
25.	शिक्षण और संगीत	- श्रीमती राजेश्वरी हरकावत
26.	Bharat and Music	- Dr. T. S. Girishkumar
33.	हिंदी पर अंग्रेजी का औपनिवेशिक आक्रमण	- डॉ.ओम प्रभात अग्रवाल
35.	श्री गुरुनानक देव जी 550वीं पावन शताब्दी पर्व	- सरदार जसबीर सिंह
37.	श्रद्धेय ठेंगड़ी जी एक युगदृष्टा व विलक्षण संगठन शिल्पी	- प्रो. भगवती प्रकाश
39.	अनूठी पहल	- साभार- दैनिक जागरण
40.	गतिविधि	

Healing with Music : The Indian and Western Traditions

❑ Dr. Bandana Chakrabarty

29

The combination and progression of specific notes in a raga leads to evoke a specific mood or 'rasa.' These rasas produce specific effects on the physical body and reduce deep emotional problems. The ancient Sanskrit text known as Natyashastra discusses several rasas like humour, love and eroticism, anger, disgust, heroism, sadness etc.

संपादकीय

डॉ. राजेन्द्र शर्मा
सम्पादक

अमरकोश के अनुसार गीत के 6 लक्षण माने गए हैं – 'सुस्वरं सरसं चैव सरागं मधुराक्षरं सालंकारं प्रमाणं च षड्विधं गीतलक्षणम्।' यह भी माना जाता है कि स्वयंभू भगवान शिव ने संगीत की आदिकल्पना की तथा गान-विद्या का सर्जन किया और उसे महर्षि नारद को सिखलाया। महर्षि नारद के द्वारा यह गीत-विद्या पृथ्वी पर अवतरित हुई। सिद्धांत रूप में यह माना जाता है कि गीत का ही प्रतिरूप गान है, गीत का संबंध जहाँ रचना विशेष से है वहीं गान का संबंध गेयता की पद्धति अर्थात् संगीत तत्त्व के प्रयोगात्मक रूप से है। मूलत: गाने की पद्धति का संबंध रस से है इसीलिए भगवान शंकर ने नव रसों की कल्पना की होगी। संगीत शास्त्र के अनुसार भगवान शंकर ने संसार को दुखों से भरा देखकर उनके निवारणार्थ गीत और वाद्य की कल्पना की होगी। इससे यह सिद्धांत बनता है कि गीत, संगीत के द्वारा जीवन के दुखों और कष्टों से मुक्ति पाई जा सकती है। इस प्रकार संगीत संसार के उत्कृष्टतम सर्जन- रूपों में से एक है और इसी कारण से भगवान शंकर को संगीत का आद्याचार्य माना जाता है। आगे जाकर पृथ्वी के विभिन्न भू-भागों के निवासियों की रुचि और रीति के विभेद से गीत के भिन्न-भिन्न रूपों तथा भिन्न-भिन्न शैलियों की परिणति हमें देखने को मिलती है। लोकगीतों का परिष्कृत रूप ही आगे जाकर साहित्यिक गीतों में परिवर्तित होता है।

संगीत से मन, हृदय तथा बुद्धि का परिष्कार होता है, संगीत से व्यक्ति का आचरण व्यवहार तथा कार्यशैली समुन्नत होती है। संगीत से ही समाज परस्पर सौहार्दपूर्ण, समरस तथा सुसंस्कृत रूप में विकसित होता है। यह सर्वमान्य है कि जिस समाज व देश में संगीत की जितनी समृद्ध तथा सुदीर्घ परंपरा होगी वह समाज व देश सामाजिक-सांस्कृतिक रूप से उतना ही समृद्ध होगा। इस क्रम में यह सर्वविदित है कि भारतीय संगीत परंपरा तथा भारतीय सांस्कृतिक परंपरा दोनों ही प्रत्येक देश-काल में उच्चता के शिखर पर रही हैं। भारत के राजनीतिक इतिहास में अनेक देशी-विदेशी राज सत्ताओं के आने-जाने के संकटों के बीच भी भारतीय संगीत निरंतर विकसित होता रहा है तथा उसके अनेक जीवनोपयोगी रूप समाज-जीवन में देखने को मिलते हैं। भारत के विभिन्न प्रांतों में, उनकी विभिन्न भाषाओं में संगीत के अनेक प्रकार तथा शैलियाँ पाई जाती हैं। वेदों की ऋचाओं से लेकर भरतमुनि के नाट्यशास्त्र तथा अनेक भक्त कवियों द्वारा अपने आराध्य की भक्ति में गाये लीला-गान संगीत के सर्वोत्कृष्ट भारतीय उदाहरण रहे हैं। वस्तुत: गायन-वादन तथा नृत्य का सम्मिलित रूप ही संगीत है।

इधर वैश्वीकरण के प्रभाव से दुनिया के सभी देशों के सांस्कृतिक वातावरण में स्पष्ट परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं। यह परिवर्तन उन देशों की राष्ट्रीय पृष्ठभूमि में सदियों से चली आ रही उन्नत स्थापत्य कला, नृत्य कला, मूर्तिकला, प्रस्तर कला, काष्ठ कला, ताम्र आदि धातुओं से संबंधित कलाओं के साथ-साथ गायन-वादन केंद्रित संगीत कला पर भी दिखाई देने लगे हैं। एक ओर जहाँ संगीत कला को बाजार के माध्यम से अधिसंख्य लोगों की पहुँच तक लाया जाने लगा है तो साथ ही विभिन्न देशों तथा प्रदेशों की संगीत परंपराओं का सम्मिश्रण भी बनता दिखाई दे रहा है। दूसरी ओर हॉलीवुड तथा बॉलीवुड सिनेमा में अभिनय तथा संगीत की एक अलग प्रकार की संगति बनाई जा रही है। यह हमारी भारतीय मूल संगीत परंपरा की समृद्धि तथा विकास में कितना सहयोगी होगी, यह तो एक विचारणीय प्रश्न है किंतु इतना अवश्य है कि जब अनेक सार्वजनिक मंचों तथा मीडिया चैनलों के माध्यम से संगीत की प्रतिस्पर्धाओं तथा संगीत प्रतिभाओं की खोज के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं तब यह और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि संगीत जीवन के विविध क्षेत्रों में कितना उपयोगी हो गया है? आज भारतीय लोक संगीत व शास्त्रीय संगीत की अनेक पद्धतियों की पुनर्स्थापना का समय है। शिक्षा और चिकित्सा ऐसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिनमें संगीत का उपयोग सर्वकालिक तथा सार्वदैशिक हो गया है।

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति में भारतीय संगीत का स्थान निरापद रूप से होना ही चाहिए। शिक्षा, संगीत, विज्ञान आदि सभी विषय हमारे राष्ट्र के विकास तथा उसकी वैश्विक मान्यता के साधन हैं। हमारा अंतिम ध्येय राष्ट्र का गौरव तथा वैश्विक स्वीकार्यता बढ़ाना ही है। इसलिए भारतीय संगीत की स्वीकृति उसके मौलिक सिद्धांतों तथा उसकी लोकरंजक प्रकृति के कारण विश्व के अनेक देशों में निरंतर बढ़ रही है। माना जाता है कि पश्चिमी संगीत की तुलना में भारतीय संगीत की धुनें अत्यंत मधुर तथा मनमोहक रही हैं। इसमें एक ओर जहाँ यौवन के गीत, झूलों के गीत, वर्षा के गीत, फागुन के गीत तथा प्रकृति में होने वाले अनेक परिवर्तनों की सुंदर व मनोरम अभिव्यक्तियों के गीत रहे हैं तो दूसरी ओर भारत की अनेक पौराणिक कथाओं के संगीत-रूपक भी हमारी पद्धति में दिखाई देते हैं। भारत में श्रृंगार के गीत, जीवन के संघर्ष के गीत, आत्मसम्मान के गीत, बलिदान के गीत, उत्सर्ग-गीत, आह्वान गीत, संबोधन गीत, क्रांति गीत आदि की भी समृद्ध परंपरा रही है। अत: निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भारतीय संगीत-परंपरा भारत की अस्मिता व भारतीयता की परिचायक है इसे हम बाजारवाद तथा उपभोक्तावाद से सुरक्षित रखकर जीवन के विभिन्न आवश्यक क्षेत्रों में और अधिक उपयोगी बना सकते हैं। ❑

भारतीय संगीत : विविध आयाम

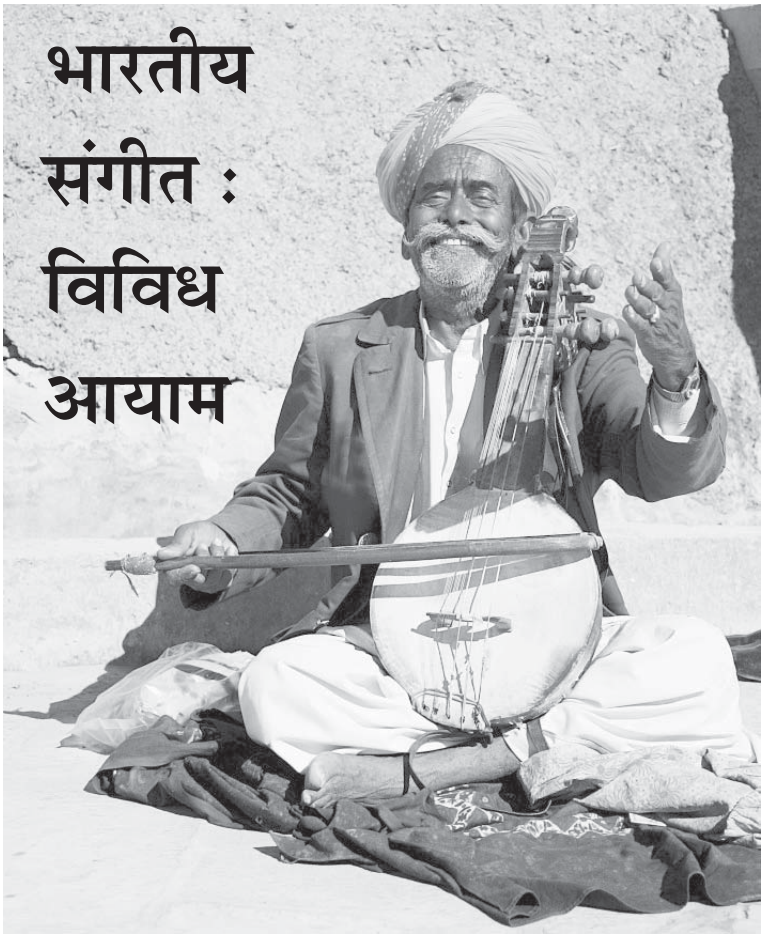

भारत में शिक्षा के क्षेत्र में संगीत का महत्त्व और भी अधिक रहा है। विद्यार्थियों की सृजनात्मकता, आत्म-विश्लेषण की क्षमता, सूक्ष्म मनोभावों की अभिव्यक्ति तथा जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के निर्माण में संगीत का विशेष योगदान रहा है। इसीलिए वर्तमान शिक्षा पद्धति में मानविकी तथा विज्ञान के मूलभूत विषयों के साथ संगीत आदि ललित कलाओं को भी उल्लेखनीय रूप से स्थान दिया जाने लगा है।

शिव शरण कौशिक
सह आचार्य
राजकीय महाविद्यालय
राजगढ़, अलवर

भारतीय समाज-जीवन में संगीत को 'ब्रह्म-सहोदर' की संज्ञा दी गई है, यह ब्रह्म कोई कोरी पारलौकिक कल्पना मात्र न होकर कण-कण अर्थात् प्राणिमात्र के जीवन में व्याप्त है। वस्तुत: संगीत की व्युत्पत्ति मनुष्य जाति के आदिम विकास से ही मानी जाती है जो कालांतर में सुरों के व्यवस्थित क्रम तथा भाषाओं के सम्यक विकास के साथ विभिन्न शैलियों तथा रूपों में हमारे सामने आया। यह सच है कि संगीत-साधना जीवन-साधना के समान ही है, जिस प्रकार जीवन अनेक उतार-चढ़ावों की एक सुंदर कड़ी है उसी प्रकार संगीत भी अनेक सुरों के आरोह-अवरोहों की मधुर और सुंदर व्यवस्था है। संगीत ही वह तत्त्व है जो मनुष्य की रागात्मक तीव्रता के कारण उसे अपने लक्ष्य में एकतान बना देता है, इसीलिए इसे जीवन-साधना कहा गया है।

भारत संस्कार की भूमि है और संगीत हमारे संपूर्ण राष्ट्र का अखिल भारतीय संस्कार है, यह संस्कार भगवद्भक्ति का संस्कार है, यह उत्सव और उमंग का संस्कार है तथा यह लोक-रीति व लोक-शिक्षा का संस्कार है। इसी कारण से भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिक स्तर पर संगीत को सदियों से अत्यंत पवित्र स्थान प्राप्त है और यह महत्त्वपूर्ण है कि संगीत की पवित्रता को मध्य काल के कुछ मुसलमान शासकों ने भी संरक्षण प्रदान किया। यह अलग बात है कि ब्रिटिश शासकों द्वारा संगीत के आध्यात्मिक पक्ष को अधिक महत्त्व न देकर इसके कला पक्ष पर ही अधिक जोर दिया परंतु यह भी सच है कि अंग्रेजी शासन में भी भारतीय संगीत सहस्त्र कंठों का हार बना रहा। वर्तमान काल में संगीत को समाज में पुन: सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा है। अब संगीत केवल मनोरंजन का साधन मात्र न रहकर आधुनिक संस्थागत शिक्षण का माध्यम तो है ही, साथ ही सभी आयु-वर्ग के स्त्री-पुरुषों के लिए समान रूप से आजीविका का साधन भी बन गया है। यह भी सच है कि संगीत संस्कृति का संवाहक माना गया है और संस्कृति के विकास क्रम के साथ जैसी एकरूपता का संबंध शिक्षा

से है वैसा ही संबंध संगीत से भी है, क्योंकि जिस प्रकार शिक्षा का मूल उद्देश्य संपूर्ण जीवन के सम्यक विकास के साथ उदात्त मानवीय भावनाओं का विकास तथा परिष्कार करना है, उसी के समरूप संगीत भी मनुष्य के आत्मोत्थान तथा भावनात्मक परिष्कृति के साथ सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक आंदोलनों का मूल आधार भी रहा है।

भारत में शिक्षा के क्षेत्र में संगीत का महत्त्व और भी अधिक रहा है। विद्यार्थियों की सृजनात्मकता, आत्म-विश्लेषण की क्षमता, सूक्ष्म मनोभावों की अभिव्यक्ति तथा जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के निर्माण में संगीत का विशेष योगदान रहा है। इसीलिए वर्तमान शिक्षा पद्धति में मानविकी तथा विज्ञान के मूलभूत विषयों के साथ संगीत आदि ललित कलाओं को भी उल्लेखनीय रूप से स्थान दिया जाने लगा है। आज वैश्वीकरण के दौर में जब वर्तमान पीढ़ी के सामने 'उपभोग' और 'अराजकता' के दो वीभत्स 'दानव' प्रचंड वेगवान बने हुए हैं, ऐसी स्थिति में नैतिकता तथा अनुशासन का सर्वाधिक क्षरण हुआ है। मूलत: हमारी सुप्त लालसाएँ ही हमें अत्यधिक उपभोग की ओर प्रेरित करती हैं। संगीत व्यक्ति के नैतिक, आध्यात्मिक तथा भावनात्मक विकास का सर्वोत्तम माध्यम माना गया है। विद्यार्थियों में एक ही पाठ्यक्रम की निरंतरता के कारण उत्पन्न नीरसता को भी संगीत ही दूर करता है।

शिक्षण संस्थानों में आयोजित किए जाने वाले अनेक कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय पर्व, त्योहारों के माध्यम से हमारा देश एक सूत्र में बंधा रहा है यह किसी से छिपा नहीं है। विद्या-केन्द्रों में प्रतिदिन होने वाली प्रार्थना सभाएँ, बाल सभाएँ, मातृभूमि वंदना, गुरु वंदना, स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, बसंत पंचमी, अनेक महापुरुषों की जयंतियाँ, शिक्षक दिवस, संस्थाओं के वार्षिकोत्सव आदि ऐसे अवसर हैं जिनमें संस्था के सभी अध्ययनरत विद्यार्थी अपनी प्रतिभा के अनुरूप संगीत की प्रस्तुतियां देते हैं जिससे उनमें परस्पर सद्भाव के साथ एकता की भावना का विकास होता है। उनका यही समवेत स्वर राष्ट्र के स्वर में रूपांतरित होता है। इसीलिए संगीत हमारे देश की सांस्कृतिक परंपराओं के साथ राष्ट्रीय परंपराओं का भी संवाहक है। इसी से हमारे देश की अखंडता और एकता बनी हुई है।

संगीत के माध्यम से आम आदमी के जज्बातों को भी अभिव्यक्ति मिलती है, उनकी भावनाओं को गहरे स्तर तक महसूस किया जा सकता है। सामान्य आदमी के द्वारा गाए जाने वाले गीत तथा उन महत्त्वपूर्ण लोगों के द्वारा गाए जाने वाले गीत जो जनसामान्य के गीत हो जाते हैं, वही जन-गीत कहलाते हैं। जन-गीत वही होता है जो सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक परिवर्तन के आंदोलनों की आवाज बन जाते हैं। वंदे मातरम..., सारे जहाँ से अच्छा...., कर चले हम फिदा... ऐसे ही जन-गीत हैं जिनकी अनुगूँज देश की सीमाओं के पार भी सुनाई देती रही है।

संगीत एक ऐसी भाषा है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने भावों, विचारों तथा क्रिया-कलापों को अद्भुत रूप से, विलक्षण रूप से संप्रेषित करता है। यदि आप बहुत अच्छी कविता लिखते हैं या कम अच्छी भी लिखते हैं तो संगीत के माध्यम से उसे अत्यंत प्रभावशाली गायकी के साथ प्रस्तुत किया जा सकता है। तमाम आधुनिक वैज्ञानिक शोध यह सिद्ध कर चुके हैं कि कठिन से कठिन विषय को भी संगीत के माध्यम से

आसानी से समझाया अथवा याद कराया जा सकता है। असल में संगीत व्यक्ति के जीवन का अनुभूत सत्य तो है ही साथ ही यह ज्ञान के विभिन्न अनुशासनों को सीखने-सिखाने का सशक्त माध्यम भी है।

संगीत और संगीत-शास्त्र का विकास प्रकृति में व्याप्त विभिन्न ध्वनियों के माध्यम से ही हुआ होगा। कई बार हम हवा के झोंके के साथ पेड़ पौधों में, पत्तियों-डालों-फूलों की जुगलबंदी, नदियों, तालाबों तथा समंदर में बहती लहरों में भी एक संगीतबद्धता का अनुभव करते हैं। मुख्यत: भारतीय संगीत के प्रमुख आधार ढोलक, तबला, बांसुरी, पखावज, हारमोनियम आदि वाद्य यंत्रों का निर्माण भी संभवतया इन्हीं ध्वनियों को सुनकर किया गया होगा। जब ये वाद्ययंत्र किसी मीठी तान में बजना शुरू करते हैं तो सुनने वाला हर व्यक्ति अपने समस्त दुख, पीड़ाओं को भूलकर मदमस्त हो जाता है, थिरकने लगता है, उसमें उत्साह का संचार होने लगता है, उसका अंग-अंग रोमांचित होने लगता है, एक पल को वह किसी अद्भुत अलौकिक आनंद के सागर में गोते लगाने लगता है और कहीं वह अपने को भूलकर संगीत की परम-सत्ता से एकाकार हो जाता है। इसीलिए तो ऊपर कहा गया है कि संगीत 'ब्रह्म-सहोदर' है। यह कोई कोरी कल्पना नहीं है बल्कि अनुभवस्यूत सिद्धांत है कि यदि पूरी दुनिया संगीत में एक रूप हो जाए तो दुनिया के सारे ऊँच-नीच के विभेद समाप्त होकर वह समरस हो जाएगी। संगीत की दुनिया में आज भी प्रेम और औदार्य, करुणा और सदाशयता जैसे गुणों का विस्तार होता दिखाई देता है।

हमारी शिक्षा पद्धति में न जाने क्यों संगीत को इतना महत्त्व नहीं दिया जाता ? इस बारे में देश की अन्यतम प्रतिष्ठित स्वर-कोकिला 'भारत रत्न' लता मंगेशकर जी ने भी अनेक बार मंचों से बालकों को

प्राथमिक कक्षाओं में संगीत की शिक्षा की आवश्यकता पर पुरजोर बल दिया है, उन्हीं के समान भारत के ही नहीं दुनिया के अनेक प्रतिष्ठित गीतकारों व गायकों ने संगीत की शिक्षा को प्राथमिक कक्षाओं में ही नहीं वरन इससे आगे की शिक्षा के साथ भी अनिवार्य किए जाने के महत्त्व को रेखांकित किया है। एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि संगीत हम में प्रकृति के प्रति बड़ा रागात्मक तथा संरक्षण-भाव उत्पन्न करता है। यह प्रकृति के उपादान ही हैं जो गीत और संगीत की लहलहाती उपज तैयार करते हैं, नदी, पहाड़, झरने, वादियाँ, बादल, उड़ते पंछी, लहलहाते खेत और यहाँ तक कि पानी के अभाव में सूखे तालाबों, पोखरों के धरातल पर मिट्टी में पड़ी दरारें भी हमें संगीत की कोई प्रेरणा दे ही जाती हैं। यह सभी घटनाएँ तथा दिखाई देने वाले दृश्यों के भेद पर ही संभवतया 'नव रसों' की कल्पना की गई होगी, क्योंकि किसी दृश्य को देखने से करुण रस की उत्पत्ति होती है तो कोई और अन्य दृश्य हमारे हृदय में स्थित स्थाई मनोभाव को प्रेम अथवा उत्साह से भर देता है। संगीत मनुष्य की अंतर्दृष्टि का रचनात्मक विकास तथा विस्तार है। मनुष्य ईश्वर की श्रेष्ठतम रचनात्मक अभिव्यक्ति है जिसे अपनी अंतर्दृष्टि के बल पर उजालों का संसार गढ़ने के लिए अनेक अवसर उपलब्ध हुए हैं। जब आप कहीं झील में उठती लहरों की मानिंद बांसुरी की मीठी तान तो कभी सितार पर थिरकती अंगुलियों से निकली स्वर- लहरियों में डुबकी लगाते हैं तो आपका मन- मयूर नाच उठता है । यही नहीं, इन अनेक वाद्य-यंत्रों के सुरों से वातावरण को सहज ही श्रोताओं के चित्त के अनुकूल बनाया जाता है। मध्यकाल के प्रसिद्ध संगीतकार तानसेन के बारे में यह किंवदंती हम सभी जानते हैं कि दरबार में उनके द्वारा गाई गई 'मेघ मल्हार' राग के सुकंठ गाने से प्रसन्न होकर बादल वर्षा करने लगते थे, दीपक-राग के गाए जाने पर काल-कंठ अमानिशा में चारों ओर सहस्त्रों दीपकों जैसा प्रकाश फैल जाया करता था। यदि ये ऐतिहासिक घटनाएं सच नहीं भी हों तब भी हृदय के अंधकार को आलोकित करने का सामर्थ्य संगीत में निरापद रूप से सर्वथा अनुभव किया जाता रहा है।

अत: अंत में यह कहा जा सकता है कि संगीत हमारे देश की समाज-व्यवस्था, शिक्षा-व्यवस्था, चिकित्सा-व्यवस्था, सांस्कृतिक परंपराओं, ऐतिहासिक गौरव, राष्ट्रीय-एकता, महान साहित्यिक परंपराओं का प्राण तो है ही इसी के साथ नागरिकों के शारीरिक मानसिक तथा भावनात्मक विकास के रूप में सर्वांगीण विकास का सर्वोत्तम माध्यम भी है। ❑

सेहत का मीत - संगीत

श्रीमती भारती दशोरा
प्राध्यापक-भूगोल
निम्बार्क शिक्षक प्रशिक्षण
महाविद्यालय, उदयपुर

संगीत एक बहुआयामी कला है, एक ऐसी कला जिसका मानव जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। संगीत मनुष्य के जन्म के साथ ही उससे जुड़ गया था। मानव अपनी कठिनाइयों एवं जिज्ञासाओं को इसी के माध्यम से हल किया करता था। यह एक प्राकृतिक माध्यम है जिसमें बिना किसी सहायक कारक के अपने अर्थ, माधुर्य और सार्थकता को बनाये रखा जा सकता है। संगीत की ध्वनियाँ किसी भी व्यक्ति के मानस पटल पर उद्दीपक का कार्य करती हैं। संगीत जब भी प्रस्फुटित होता है वो मानव मन के दुष्प्रभाव, संवेग, संवेदनाओं को सन्तुलित करता है। संगीत में युद्ध, करुणा, व्यथा, क्रोध, काम, तृष्णा एवं विरह इत्यादि सभी पक्षों में अपना प्रभाव बनाये रखने की क्षमता है। इसलिये संगीत कला को अन्य सभी ललित कलाओं में सर्वोत्तम कहा गया है। संगीत मात्र भाषा शब्द एवं माधुर्य से भाव, अनुभूति, कल्पना को प्रभावित नहीं करता वरन् मानसिक एवं शारीरिक विकास में भी अपनी भूमिका निभाता है।

भारतीय संगीत हमारी सभ्यता का प्रतीक है और भावनाशील प्राणी होने के कारण मनुष्य अन्य प्राणियों की अपेक्षा भावों की अभिव्यक्ति सहजता से कर पाता है। वर्तमान समय में व्यवस्था तनावयुक्त एवं प्रतिस्पर्धा युक्त है। ऐसी स्थिति में संगीत ही एक ऐसी कला है जो मानव के आहत मन व आत्मा को क्षण भर के लिये शान्ति एवं सुख प्रदान करती है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ उसे सभ्य, सुसंस्कृत, सुयोग्य एवं सहृदय बनाती है। यह लोगों को संवेदना के स्तर पर एक गहरी समझ देकर उन्हें बेहतर बनने की दिशा में प्रेरणा प्रदान करता है और यही तत्त्व जब निजता से व्यापकता की ओर बढ़ता है तब दुनिया ही बदल जाती है। यह संगीत ही है जो आदि से अन्त को जोड़ कर व्यापक साहित्य में परिणत कर देता है। आत्मा को स्नेह से भर कर मन को गहन अन्धकार से अनन्त ऊँचाइयों तक ले जाता है। सात शुद्ध एवं पाँच कोमल स्वरों वाला संगीत भले ही मनोविज्ञान को जन्म न दे, पर मानव मन व शरीर को स्वस्थ रखकर नव काया एवं नव स्वरूप अवश्य ही प्रदान करता है। विभिन्न वैज्ञानिक प्रयोगों के द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि संगीत साधना एवं योग दोनों से मुनष्य के जीवन में शक्ति का संचार होता है और अनेक बीमारियों का उपचार किया जा सकता है। संगीत चिकित्सा आजकल कई स्वास्थ्य समस्याओं से राहत दिलाने में अहम् भूमिका भी निभा रही है। यदि आप तनाव में रहते हैं या अनिद्रा की समस्या है तो आप इस चिकित्सा का सहारा ले सकते हैं। संगीत की ध्वनि से उत्पन्न विशिष्ट तरंगें मस्तिष्क पर उसी तरह काम करती हैं जैसे कम्प्यूटर में सॉफ्टवेयर करता है और अपेक्षित परिणाम भी प्राप्त होते हैं। कविता या भजन में जो शाब्दिक अभिव्यक्तियाँ होती हैं उन्हें जब

कई प्राचीन ग्रन्थों में संगीत द्वारा रोगोपचार की विधि वर्णित है। चरक ऋषि ने अपनी पुस्तक 'सिद्धिनाथ' के छठे अध्याय में संगीत के चिकित्सीय प्रभाव का वर्णन किया है। आयुर्वेद के अनुसार दोष एवं धातु के असंतुलन से ही बीमारियों का जन्म होता है। शरीर और मस्तिष्क में इनका सन्तुलन बनाये रखना ही चिकित्सकों का कार्य होता है। सांगीतिक स्वर लहरियाँ इसे संतुलित करने में सक्षम है। अतः संगीत द्वारा चिकित्सा भी सम्भव है।

संगीत के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है, तो वे उपयुक्त वातावरण का निर्माण करती हैं और कई प्रकार की जटिल बीमारियों में इसे पूरक उपचार के तौर पर उपयोग में लाया जाता है। 1950 में संयुक्त राज्य अमेरिका में 'नेशनल एसोसिएशन फॉर म्यूजिक थेरेपी' की स्थापना की गई। इसके द्वारा संचालित पाठ्यक्रम अनेक विश्वविद्यालयों में चल रहे हैं जो स्नातक की डिग्री देते हैं। संगीत चिकित्सा को अन्वेषकों ने मानसिक रोग, अपंगता (दिव्यांगता), मस्तिष्क चोट के रोगी, जीर्ण व्याधियों से ग्रसित रोगियों के लिये उपयोगी बताया। इनका मानना है कि संगीत के माध्यम से ध्वनि तरंगें कानों के द्वारा ग्रहण की जाती हैं जो संवेदी तन्त्रिकाओं के माध्यम से मस्तिष्क तक पहुँचती हैं और वहीं से न्यूरॉन संरचना द्वारा मस्तिष्क के अन्य भागों पर प्रभाव डालती हैं। प्रसिद्ध संगीत चिकित्सक रिक वीस के अनुसार 'सम्पूर्ण मानव शरीर ही संगीतमय है। हृदय की धड़कन, नाड़ी का फड़कना, मस्तिष्क की तरंगें, हारमोन्स का प्रवाह, साँसों की लय सभी कुछ एक वृहत संगीत ही है।'

कई प्राचीन ग्रन्थों में संगीत द्वारा रोगोपचार की विधि वर्णित है। चरक ऋषि ने अपनी पुस्तक 'सिद्धिनाथ' के छठे अध्याय में संगीत के चिकित्सीय प्रभाव का वर्णन किया है। आयुर्वेद के अनुसार दोष एवं धातु के असंतुलन से ही बीमारियों का जन्म होता है। शरीर और मस्तिष्क में इनका सन्तुलन बनाये रखना ही चिकित्सकों का कार्य होता है। सांगीतिक स्वर लहरियाँ इसे संतुलित करने में सक्षम है। अत: संगीत द्वारा चिकित्सा भी सम्भव है।

सामवेद में भी रोगों के निवारण के लिये संगीत के प्रयोग का वर्णन है। आचार्य शारंगदेव ने अपने ग्रन्थ 'संगीत रत्नाकर' के स्वराध्याय में स्वरों की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए विभिन्न स्वरों से सम्बन्धित स्नायुचक्रों और शारीरिक अंगों का

विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। विशेषत: सामवेद की ऋचाओं का गायन हृदय रोगियों के लिये बड़ा लाभकारी होता है। सामवेद की स्वरलहरी शरीर के रक्त संचालन पर अनुकूल प्रभाव डालती है।

वर्तमान समय में बढ़ता एकाकीपन या अतिव्यस्तता एक ऐसी समस्या है जिसके चलते हम एक दूसरे के साथ समय बिताना, विचारों का आदान प्रदान करना, मजाक-मस्ती में हँसना आदि गतिविधियों से बहुत दूर होते जा रहे हैं। ऐसे में मन की बातें मन में रह कर घुटन एवं अवसाद का कारण बनती हैं और लम्बे समय तक रहने से यही मानसिक अस्वस्थता का कारण बन जाती हैं। संगीत के द्वारा इसका भी निदान सम्भव है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार इसके उपचार हेतु उपलब्ध मँहगी दवाइयाँ शरीर पर विपरीत प्रभाव डालती है, जबकि संगीत में रोग निरोधक गुण अधिक होते हैं। इस पद्धति में चिकित्सीय संगीत रोगी को सुना कर उसका ध्यान संगीत की ओर केन्द्रित कर सफल उपचार किया जा सकता है। संगीत चिकित्सा में मानसिक तनाव से होने वाले विभिन्न रोग जैसे- सिरदर्द, एकचित्त न होना, इच्छा शक्ति बढ़ाना, स्मरण शक्ति, मनोरोग तथा मानसिक मंदता आदि रोगों का सफल उपचार सम्भव है। इसके अतिरक्ति संगीत चिकित्सा के अन्य पहलुओं पर विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं। फ्रांसीसी प्राणिशास्त्रियों ने समस्त जीवधारियों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि संगीत के माध्यम से प्रत्येक जीव के मस्तिष्क एवं नाड़ी संस्थान पर विशेष प्रभाव पड़ता है। जीवों की प्रकृति एवं उनकी मन: स्थिति के अनुरूप संगीत तैयार किया जाये तो जीवधारियों में प्रसन्नता और शारीरिक उत्साह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अनुसंधानकर्ताओं ने यह भी बताया कि संगीत द्वारा पेड़-पौधों को रोग ग्रस्त होने से बचाया जा सकता है क्योंकि संगीत से पेड़-पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। यू.एस. डिपार्टमेन्ट ऑफ एज्यूकेशन के अनुसार विशेषज्ञों ने यह भी स्वीकार किया है कि संगीत से एकाग्रता, स्मरण शक्ति, आत्मविश्वास बढ़ता है जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास का सूचक है।

अत: कह सकते हैं कि संगीत भावना का विषय है और भावनात्मक अस्थिरता को दूर करना ही संगीत-चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य है। संगीत चिकित्सा विखंडित मानसिकता एवं अनियंत्रित भावनाओं पर नियंत्रण करती है। इसलिए चिकित्सा के लिये दवाओं के साथ-साथ संगीत की सुमधुर ध्वनियों की भी आवश्यकता है। दुनिया को मंत्र मुग्ध कर देने वाला संगीत अब चिकित्सा में भी चमत्कार दिखाने को तैयार हैं -

संगीत है शक्ति ईश्वर की,
हर स्वर में बसे हैं राम।
रागी जो सुनाए रागिनी,
रोगी को मिले आराम।। ❑

ब्रह्मानन्द सहोदर : संगीत

डॉ. रचना जोशी
(प्राध्यापक - संस्कृत, निम्बार्क शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर)

गायन-वादन-नर्तन जिसमें स्त्रावित हो,
रसधार भी, जिसमें भावपूर्ण जब होती भक्ति।
देता सब कष्टों से मुक्ति होती है,
जब सरगम झंकृत सरस मधुर यही है संगीत।।

संगीत के कर्णपथ पर आते ही धड़कनें सरगममय हो जाती हैं, मधुर-ध्वनि की ताल-लय पर मनमयूर नाच उठता है, राग-तरंगिणी के प्रवाह से वाणी प्रवाहमयी हो जाती है, अंग-प्रत्यंग थिरकने लगता है, हर जगह, प्रत्येक वस्तु प्रसन्नता का आभास कराती है, व्यक्ति उसमें इतना निमग्न हो जाता है कि कि उसे समय का, स्थान का, लोगों का, यहाँ तक कि स्वयं का ध्यान नहीं रहता, अपनी सुधबुध खो बैठता है और इसकी वह अनुभूति भी नहीं कर पाता-यही अवस्था चरमोत्कर्ष की, परमानन्द की, चरम आनन्द की अवस्था है तथा इसे ही 'ब्रह्मानन्द सहोदर' कहा जाता है जो कि साधारण को असाधारण बना देता है। इसी चरम अवस्था का नाम है - रस।

रस-निष्पत्ति के विषय में भरतमुनि ने कहा है- 'विभावानुभावव्यभिचारी संयोगाद्रसनिष्पत्तिः' अर्थात् जब स्थायीभावों का विभावों, अनुभावों तथा व्यभिचारी या संचारीभावों के साथ संयोग होता है तब वह स्थायीभाव रस में रूप निष्पन्न होता है तथा उसका आस्वादन किया जाता है। मानव हृदय में बीज रूप में स्थित स्थायीभाव तथा उनसे निष्पन्न रस नो प्रकार का माना गया है, जो इस प्रकार है- रति-शृंगार, हास-हास्य, शोक-करुण, क्रोध-रौद्र, उत्साह-वीर, भय-भयानक, जुगुप्सा-वीभत्स, आश्चर्य-अद्भुत तथा शम-शान्त रस। कालान्तर में वत्सल-वात्सल्य तथा भक्ति-भक्ति को भी रसान्तर्गत स्वीकृत करके रसों की संख्या ग्यारह मानी गई है।

भरतमुनि चार रसों को मुख्य मानते हैं- शृंगार, रौद्र, वीर और वीभत्स तथा चार रसों को गौण मानते हैं- हास्य-करुण-अद्भुत और भयानक। उद्भट ने शांत रस की परिकल्पना की और परवर्ती आचार्यों द्वारा वात्सल्य व भक्ति को भी रसरूप से परिगणित किया गया।

जिस प्रकार भोजन के षड् रस-तिक्त-कटु-कषाय-लवण-अम्ल और मधुर अलग-अलग प्रकार के भोजन में मिलकर भोजन को और अधिक स्वादिष्ट बना देते हैं इसी प्रकार साहित्य अथवा काव्य के नवरस भी जिन्हें काव्यास्वादन, काव्यसौन्दर्य, रसास्वादन, आत्मानन्द का वाचक कहा गया है - आनन्दानुभूति करवाते हैं। इन रसों का आस्वादन पान के रस की भाँति अनिर्वचनीय है। अतः रस आस्वाद, अखण्ड, ज्ञानरहित, स्वप्रकाशमान, चिन्मय, चमत्कारपूर्ण तथा ब्रह्मानन्द सहोदर कहा जाता है। रस अन्तःकरण की वह शक्ति है जिसके कारण इन्द्रियाँ गतिशील होती है, मन कल्पनाशील होता है जिससे भाव उद्दीप्त होकर जब रसरूप में अभिव्यक्त होता है तब वह भाव न रहकर केवल रसरूप में रहता है जो कि अप्रतिम, अप्रमेय और वर्णनातीत हो जाता है।

संसार में प्रचलित कोई भी कला हो, कलाकार अपनी भावाभिव्यक्ति इतनी सशक्तता से प्रदर्शित करता है कि सहृदय व्यक्ति उसमें निहित भावगत सौन्दर्य से आनंदित व अभिभूत हुए बिना रह ही नहीं सकता। लेकिन संगीत ऐसी कला-साधना है, जिसे देखकर-सुनकर या उसमें स्वयंसिद्ध होकर परमानन्द की

अनुभूति भी की जाती है तथा दूसरों को करवाई भी जा सकती है। परमानन्द की इसी अनुभूति में व्यक्ति इतना रसनिमग्न हो जाता है कि वह लौकिक न होकर अलौकिक अवस्था में पहुँच जाता है, इसीलिए रस को लौकिक न मानकर अलौकिक माना जाता है। अत: जब संगीतकला मानवीय भावों को उद्दीप्त कर रसावस्था तक पहुँचा देती है तब वह संगीत अद्वितीय हो जाता है। इस प्रकार संगीत तथा रस का घनिष्ठ व अटूट संबंध है।

संगीत, नाट्य तथा काव्य के क्षेत्र में रंजकता की उत्पत्ति रसनिष्पत्ति पर निर्भर होती है। संगीत हेतु स्वरों की आवश्यकता होती है जो कि किसी भी रस निष्पत्ति के प्रमुख कारक माने जाते हैं। संगीत में सात-स्वर होते हैं - सा, रे, गा, म, प, ध, नि और इन्हीं सप्तसुरों का संबंध रसों से होता है। आदिकाल से ही रस को संगीत की आत्मा माना गया है। संगीत के सात स्वरों को सा-षड्ज, रे-ऋषभ, ग-गंधार, म-मध्यम, प-पंचम, ध-धैवत तथा नि-निषाद के नाम से जाना जाता है। नारद ने अपने ग्रन्थ 'संगीत मकरंद' में उल्लेख किया है कि षड्ज से अद्भुत व वीररस की, ऋषभ से रौद्र रस की, गंधार से शांतरस की, मध्यम से हास्य रस की, पंचम से श्रृंगार रस की, धैवत से वीभत्स रस की और निषाद से करुण रस की उत्पत्ति होती है।

गायन-वादन-नर्तन : तीनों का समावेशित रूप संगीत है जो कि सात-सुरों पर आधारित है। इन्हें शास्त्रीय, उपशास्त्रीय व सुगम संगीत के रूप में विभक्त किया गया है। शास्त्रीय संगीत को 'मार्गी' भी कहा जाता है जो कि हिन्दुस्तानी संगीत व कर्नाटक संगीत के रूप से विभक्त है। हिन्दुस्तानी संगीत विभिन्न रागों में निबद्ध है जो कि उत्तर भारत में मुगल बादशाहों की छत्रछाया में श्रृंगार रस की प्रधानता के साथ पुष्पित-पल्लवित हुआ जबकि कर्नाटक संगीत दक्षिण भारत के मंदिरों में भक्तिरस की प्रधानता को प्रकट करने वाला है। भारतीय मान्यताओं के अनुसार विविध रागों के गायन हेतु ऋतुएँ निर्धारित हैं। सही समय पर गाया जाने वाला राग अधिक प्रभावी होता है। उदाहरण स्वरूप-राग भैरव-शिशिर ऋतु में, राग हिंडोल-बसन्त ऋतु में, राग दीपक-ग्रीष्म ऋतु में, राग मेघमल्हार-वर्षा ऋतु में, राग मालकौंस- शरद् ऋतु में तथा रागश्री- हेमन्त ऋतु में गाए जाते हैं।

उपशास्त्रीय संगीत में ठुमरी, टप्पा, होरी, कजरी आदि का समावेश है तो सुगम संगीत में भजन, फिल्मी-गीत, भारतीय पोप (Pop) तथा लोकसंगीत समाविष्ट हैं। विभिन्न रागों से उत्पन्न विभिन्न रसों के रंग एवं देवता भी निर्धारित किए गए हैं जो इस प्रकार हैं- श्रृंगाररस-हरा रंग-विष्णु देवता, रौद्ररस-लालरंग-रुद्र देवता, वीररस-सुनहरा पीला रंग-इन्द्रदेवता, वीभत्सरस-नीला रंग -महाकाल देवता, हास्य रस-सफेद रंग- शिवगण देवता, करुण रस-कोरा वस्त्र रंग-यम देवता, भयानक रस-काला रंग- कामदेव, अद्भुत रस-पीला रंग-ब्रह्मा देवता।

जो शास्त्रीय संगीत में रुचि रखते हैं; शास्त्रीय गायकों की विविध रागों में निबद्ध रागिनियाँ, शास्त्रीय नर्तकों की संगीत की धुनों व संगीतमय शब्दों के साथ अपने भावों को जोड़ती नृत्य मुद्राएँ, वाद्ययंत्रों के वादन से अपनी कला का बिखेरता जादू युक्त संगीत उन्हें उसी परम चरमावस्था में पहुँचा देता है जहाँ वे रसास्वादन करते हुए स्वर्गिक सुख का भोग करते हैं।

संसार में प्रचलित कोई भी कला हो, कलाकार अपनी भावाभिव्यक्ति इतनी सशक्तता से प्रदर्शित करता है कि सहृदय व्यक्ति उसमें निहित भावगत सौन्दर्य से आनंदित व अभिभूत हुए बिना रह ही नहीं सकता। लेकिन संगीत ऐसी कला-साधना है, जिसे देखकर-सुनकर या उसमें स्वयंसिद्ध होकर परमानन्द की अनुभूति भी की जाती है तथा दूसरों को करवाई भी जा सकती है। परमानन्द की इसी अनुभूति में व्यक्ति इतना रसनिमग्न हो जाता है कि वह लौकिक न होकर अलौकिक अवस्था में पहुँच जाता है, इसीलिए रस को लौकिक न मानकर अलौकिक माना जाता है।

इसी प्रकार का आनन्द उपशास्त्रीय संगीत तथा सुगम संगीत के माध्यम से भी प्राप्त होता है। बहुत छोटे-छोटे बच्चे जानवरों से संबंधित कविताओं, गीतों, नृत्यों को सुनकर-देखकर इतना आनन्दित हो जाते हैं कि वे रोना भूलकर शांति से सो जाते हैं या अपनी वय के अनुसार अन्त:स्थित स्थायी भावों के उद्दीप्त होकर रसरूप में परिणत आनन्द की अनुभूति करते हैं। किशोरावस्था के बालक श्रृंगारिक, वीरतापूर्ण, जोशीले, देशभक्ति को उद्दीप्त करने वाले संगीत श्रवण से आत्मविभोर हो अपने भावी जीवन की कल्पना कर अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं। युवावस्था तक जीवन के हर अच्छे व बुरे अनुभवों को भोगते हुए व्यक्ति परिस्थिति के अनुरूप वैसा ही संगीत या स्थिति से बाहर निकलने हेतु विपरीत रसमय संगीत के रसास्वादन से जीवन में नए जोश के साथ परिस्थितियों का सामना करने की ताकत-हिम्मत व उत्साह प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार संगीत के संयमित सुर जीवन को भी संयमित व नियंत्रित करते हैं तथा जीवन के प्रति मधुरता के भावों को विकसित करते हैं। संगीत का सान्निध्य मात्र ही शरीर से लेकर आत्मा को संतृप्त करता हुआ पूर्णता की अनुभूति कराता है तथा अन्य किसी प्राप्ति की कामना नहीं रहती। इसकी साधना त्रिविध संतापों की समाप्ति में भी सहायक है। अत: संगीत मनोरंजन के साथ ही स्मरणशक्ति में वृद्धि, तनाव व बैचेनी में कमी, दर्दानुभूति में कमी लाकर शरीर के साथ मन व आत्मा को भी सत्यं शिवं सुन्दरम् के रूप में ढाल अपनी महत्ता प्रतिपादित करता है। अत: परम आनन्द की अनुभूति कराकर संसार के दु:खों से मुक्ति दिलाने वाले संगीत में विषय में यही कह सकती हूँ-

नृत्य-गान और वाद्य यंत्रों की
तानों-रागों से हो अलंकृत मनवीणा को करता
झंकृत ब्रह्मानन्द-सहोदर संगीत।। ❑

भारतीय समाज में संगीत का महत्त्व

डॉ. सोमकान्त भोजक
पूर्व प्राचार्य
राजकीय स्नातकोत्तर
संगीत संस्थान, राजस्थान

संगीत मानव जीवन का आधार है एवं मानव जीवन की रग-रग में बसा हुआ है। दुनिया का कोई भी व्यक्ति संगीत से विलग नहीं हो सकता है। संगीत केवल धनोपार्जन का साधन ही नहीं बल्कि ईश्वरोपासना, मोक्ष प्राप्ति एवं आध्यात्मिक सिद्धि का मुख्य मार्ग है। संगीत से नकारात्मक भावनाएँ नष्ट होने लगती हैं, जिससे जीवन में नई ऊर्जा का संचार होता है। भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर संगीत कला की परम्परा भारत में अत्यन्त प्राचीन है जो कि मानव हृदय के सूक्ष्मतम भावों की सहज अभिव्यक्ति है।

भारत में प्रागैतिहासकाल से लेकर वैदिक काल, रामायण काल, महाभारत आदि में संगीत के अनेक वाद्ययंत्र तथा शैलियाँ प्रचलन में रही है। वैदिक ऋषि-ऋषिकाओं, स्वामी हरिदास, भरतमुनि, जयदेव, पाणिनी के बाद मध्यकाल में तानसेन, बैजूबावरा, सारंगदेव, चैतन्य महाप्रभु, त्यागराज, अमीर खुसरो जैसे प्रसिद्ध संगीतज्ञों ने भारतीय संगीत परम्परा को समृद्ध किया। मेवाड़ के महाराणा कुम्भा ने 'गीत गोबिन्द' पर 'रसिक प्रिया' नाम से टीका लिखी जो एक महत्त्वपूर्ण कृति है।

डॉ. एस.एन. रातांजनकर जी के अनुसार भारत में संगीत के प्रथम विद्यालय की स्थापना 'बड़ौदा स्टेट म्यूजिक स्कूल' के रूप में सन् 1890 के आस-पास हुई। इसके पश्चात् पं. विष्णु नारायण दिगम्बर जी ने 5 मई 1901 ई. को लाहौर में गंधर्व महाविद्यालय की स्थापना की। सन् 1940 में दिल्ली में स्थापना हुई। इसके पश्चात् सन् 1926 में पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे जी ने 'मैरिस म्यूजिक कॉलेज' (भातखण्डे संगीत महाविद्यालय) की स्थापना की। इसी वर्ष ग्वालियर में माधव संगीत महाविद्यालय एवं इलाहाबाद में प्रयाग संगीत समिति की स्थापना की गई।

आधुनिक संगीत जगत् की उक्त दो महान विभूतियों के अथक प्रयासों के कारण भारत के विभिन्न विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में संगीत को एक विषय के रूप में मान्यता प्राप्त हुई फलस्वरूप आज देश के लगभग सभी शीर्ष विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को स्नातक, स्नातकोत्तर, डॉक्टरेट जैसी उपाधियाँ दी जा रही है।

संगीत का महत्त्व

प्राणी के सर्वांगीण विकास के लिये जिन विभिन्न आयामों की जरूरत होती है उनमें सर्वश्रेष्ठ आयाम 'संगीत' है। जड़-चेतन प्राणी को विमुग्ध कर लेने की अद्भुत शक्ति एक मात्र 'संगीत' में है। संगीत मानव जीवन के लिये ही नहीं अपितु सभी जीव जन्तुओं, वनस्पतियों के विकास में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस हेतु भारत में कई सार्थक प्रयोग किये गये, जिनमें पाया गया कि जो जीव या वनस्पति ऐसे वातावरण या माहौल में रहते हैं, जहाँ संगीत की मधुर स्वर लहरियों की ध्वनि से वातावरण संगीतमय बना रहता है, वहाँ के जीव-जन्तुओं व वनस्पतियों का विकास संगीत विहीन वातावरण में पलने वाले जीव-जन्तुओं व वनस्पतियों की तुलना में ज्यादा तीव्र गति से व संतुलित होता है।

संगीतमय गाने व सुनने से व्यक्ति में अनुशासन, मर्यादा, काम के प्रति लगन व उत्साह में अभिवृद्धि के साथ-साथ रचनात्मक कृति व वृत्ति, सकारात्मक सोच व सद् विचारों के अंकुर अन्तःकरण में प्रस्फुटित होते हैं। संगीत व्यक्ति को सुख व दुख में साम्य/संतुलित बनाये रखने का साधन है। संगीत रूपी साधन के सहारे व्यक्ति अपने अभीष्ट लक्ष्यों तक पहुँचने का मार्ग तैयार कर सकता है। मधुर संगीत से व्यक्ति के मानस पटल पर सदैव आशा रूपी किरणें अंकित रहती हैं। ईश्वरोपासना में तो संगीत की अनूठी भूमिका होती ही है, साथ ही संगीत के सानिध्य से व्यक्ति अपने सूक्ष्म तल तक यात्रा कर स्वयं को दर्पण के समान चमकाने व पारदर्शी बनाये रखने में सफल हो सकता है। श्रेष्ठता के विभिन्न आयाम यानि अच्छे से श्रेष्ठ एवं श्रेष्ठ से सर्वश्रेष्ठ तक की यात्रा भी संगीत रूपी साधन के सहारे ही सहज रूप में की जा सकती है। संगीत व्यक्ति के जीवन में बगैर पथप्रदर्शक 'आँख' के रूप में भी सहायक होता है। संगीत रूपी पाँखों के सहारे व्यक्ति निराशा रूपी पाताल से आशा रूपी आकाश में उड़ान भरने की

योग्यता प्राप्त कर सकता है। संगीत से व्यक्ति के मन में सहकार, सद्भाव व समर्पण का भाव जाग्रत होता है। संगीत व्यक्ति को दिशा देता है, सन्मार्ग पर चलने के लिए अभिप्रेरित करने की शक्ति भी संगीत में है। व्यक्ति के विकास रूपी रथ को चलायमान रखने में संगीत 'सारथी' के रूप में सहायक होता है। संगीत अपने विशिष्ट अलौकिक गुणों के कारण मानव जीवन के लिये सदैव उपयोगी व पथ प्रदर्शक रहा है।

संगीत चिकित्सा पद्धति के रूप में भी काम में लिया जाता है। संगीत की मधुर ध्वनि मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षक, रोग निवारक एवं आयुर्वेदिक होती है। 'संगीत में ध्वनि एक प्राणहीन पदार्थ नहीं है, 'ओम्' ध्वनि से उत्पन्न सप्तस्वर 'सा रे गा म प ध नी'' सम्पूर्ण रूप से चर जगत से प्राणवाहक अस्तित्व वाला तत्त्व है।' (संगीत दिसम्बर 2002, पृष्ठ 24)। संगीत के अन्तर्गत गायन, वादन एवं नृत्य में कुछ आसन नैसर्गिक तौर से ही हो जाते हैं यथा 'ओ' शब्द के उच्चारण के समय सम्पूर्ण शरीर में तथा 'म' शब्द के उच्चारण के समय मस्तिष्क में कम्पन्न होता है, जो हमारे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिये अत्यधिक उपयोगी है।

संगीत के सात स्वरों (सा, रे, गा, म, प, ध, नी) में रागों का निर्माण हुआ, 'राग' शास्त्रीय संगीत का प्राण है, परम्परागत नियमों में बंधे स्वर-समूह को राग कहते हैं। प्रत्येक राग का अपना एक भाव व रस होता है, जो मनुष्य पर अपना प्रभाव छोड़ता है। ये राग मनुष्य को बाह्य स्तर पर व्यक्ति के चेतन को ही उद्वेलित नहीं करते अपितु व्यक्ति के अन्तर्निहित सूक्ष्म विशिष्टताओं को भी झंकृत करते हैं। उदाहरण के लिये मानसिक रोग अथवा मनोविकार में ललित, केदार तथा अल्सर रोगों के निदान में मधुवंती राग सहायक है। तीव्र ज्वर में मालकोस, बसन्त, बहार, अस्थिमज्जा व अनिद्रा रोग में भैरवी, केदार तथा ऐसीडिटी में मारवा, कलावती जैसे रागों से उपचार किया जा सकता है। हृदय रोग में भैरवी, शिवरंजनी तथा नर्वसनेस व अधीरता के लिये अहीर भैरव, पूरिया, तोड़ी जैसी रागों से इन रोगों को कम किया जा सकता है। अस्थमा रोग के लिये पूरिया, मालकौस, यमन व कलर ब्लाइण्डनैस के लिये मुलतानी राग को गाने व सुनाने का निर्देश संगीत चिकित्सकों ने दिया है। संगीत मार्तण्ड एवं श्रीओंकार नाथ ठाकुर, प्रमुख ध्रुवपद गायक उस्ताद अमीनुद्दीन डागर, सुप्रसिद्ध कर्नाटक संगीतकार डॉ. एम. बाल मुरली कृष्णन का कहना है कि रागों द्वारा टी.बी., लकवा, मनोदैहिक रोगों जैसे उच्च रक्तचाप, मधुमेह, सिरदर्द आदि का इलाज होता है। 'विभिन्न रागों और सिंथेटिक साउण्ड कैप्सूल' के माध्यम से रोगी का मानसिक संतुलन बनाकर इलाज किया जाता है। (संगीत सितम्बर, 1996, पृ. 44)

रागों द्वारा उपचार करते समय कुछ विशेष बातों का ज्ञान आवश्यक है, जैसे रागों के शुद्ध रूप का उच्चारण, रोगी की मनोदशा, रोग के लक्षण व कितनी देर तक राग को सुनना या चिकित्सा देनी है, का ज्ञान होना चाहिये। एकाग्रतापूर्वक मधुर राग गाने व सुनने से मानसिक शक्ति मिलती है। यह अनुभव सिद्ध सत्य है कि मधुर संगीत सुनने से कार्यकुशलता में अभिवृद्धि होने के साथ-साथ व्यक्ति भयंकर थकान के बावजूद भी एकदम चुस्त दुरुस्त महसूस करने लगता है। इस सम्बन्ध में उल्लेख करना प्रासंगिक है कि आधुनिक भारत की बीसवीं सदी में एक से बढ़कर एक संगीतज्ञ, पार्श्वगायकों/ गायिकाओं ने भारत में ही नहीं अपितु विश्व संगीत क्षेत्र में अमिट छाप अंकित की है। उनमें से स्वर कोकिला व भारत रत्न लतामंगेश्कर जी (लता दीदी), स्वर के बादशाह श्री किशोर कुमार, श्री मन्नाडे, श्री मोहम्मद रफी, भारत रत्न श्री भूपेन हजारिका, पंडित भीमसेन जोशी, श्री महेन्द्र कपूर आदि के द्वारा मधुर कण्ठ से गाये गीत आज भी व्यक्ति के मन-मस्तिष्क को झंकृत कर अपार आनन्द व सुकून देते हैं।

इस प्रकार मानव एवं समस्त जीव जन्तुओं व वनस्पतियों को पल्लवित पोषित करने में भारतीय संगीत की अहम भूमिका को स्वीकार करने के साथ-साथ इस तथ्य को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है कि आज संगीत शिक्षा का जितना प्रचार प्रसार हुआ है उसके साथ ही उसकी गुणवत्ता में काफी गिरावट भी आयी है। गुरु शिष्य परम्परा या घराने द्वारा पद्धति अपनाकर जो शिष्य संगीत सीखता था, निश्चित रूप से वह कलाकार बनकर ही निकलता था तथा उसके लिये जीविकोपार्जन का मार्ग स्वत: ही प्रशस्त हो जाया करता था, लेकिन विद्यालयीन संगीत शिक्षा में आज ऐसा नहीं है। अत: इस चुनौती को स्वीकार करते हुये सकारात्मक व रचनात्मक भाव से भारतीय संगीत पर ध्यान दिया जाना चाहिये ताकि संगीत के महत्त्व के सम्बन्ध में उल्लेखित उक्त तथ्यों की वास्तविक परिणति देखी जा सके।❑

संगीत व्यक्ति के जीवन में बगैर पथप्रदर्शक 'आँख' के रूप में भी सहायक होता है। संगीत रूपी पाँखों के सहारे व्यक्ति निराशा रूपी पाताल से आशा रूपी आकाश में उड़ान भरने की योग्यता प्राप्त कर सकता है। संगीत से व्यक्ति के मन में सहकार, सद्भाव व समर्पण का भाव जाग्रत होता है। संगीत व्यक्ति को दिशा देता है, सन्मार्ग पर चलने के लिए अभिप्रेरित करने की शक्ति भी संगीत में है। व्यक्ति के विकास रूपी रथ को चलायमान रखने में संगीत 'सारथी' के रूप में सहायक होता है।

शिक्षा में संगीत के सकारात्मक प्रभाव

बजरंग प्रसाद मजेजी
शिक्षाविद् व स्वतन्त्र लेखक

गार्डनर एच. ने मल्टीपल इंटेलिजेंसीस एण्ड एजूकेशन पुस्तक में बताया कि ''शिक्षा में संगीत विद्यार्थियों की कलात्मक दृष्टि को जाग्रत करने, उनके अवकाश के समय को रचनात्मक उपयोग करने तथा उन्हें बेहतर शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की ओर ले जानी वाली उत्तम विद्या है। इसका उपचारात्मक महत्त्व भी है।'' संगीतमय मधुर ध्वनियाँ सूक्ष्म आन्दोलन और लय जब उद्दीपक के रूप में क्रियाशील होते हैं तो दर्शक अथवा श्रोता की एक से अधिक ज्ञानेन्द्रियाँ जाग्रत होकर एक अपूर्व संवेगात्मक सुख प्रदान करती है। गायन, वादन एवं नृत्य की क्रिया से विद्यार्थियों में सृजनात्मक शक्ति का संचार होता है। संगीत के विशिष्ट प्रयोग से मस्तिष्क गहरी एकाग्रता की दशा में आ जाता है। इस कारण विद्यार्थी की ऊर्जा, स्मरण शक्ति एवं कक्षागत उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। संगीत शिक्षा में समूह गान या वृन्दवादन से सामान्य तथा विशिष्ट श्रेणी के विद्यार्थियों में मनोरंजन के साथ ही एकाग्रता बढ़ती है। संगीत में साथ गाने बजाने वाले एक ही समूह के सदस्य होने के कारण उनमें 'हम' की भावना का विकास होता है। परस्पर मैत्रीभाव में वृद्धि होती है और बेहतर सामाजिक कौशल का विकास होता है। पिरो एवं आर्टिज नामक शोधकर्ताओं ने पाया कि प्राथमिक स्तर पर शाब्दिक स्मृति, शब्द भंडार तथा पठन कौशल विकास में संगीत का विशेष योगदान पाया गया है। गणितीय एवं स्थानिक क्षेत्रों में भी संगीत शिक्षा का सकारात्मक प्रभाव देखा जा सकता है। जारकामो नामक शोधकर्ता ने सन् 2011 में शोध के निष्कर्ष में बताया कि संज्ञानात्मक, श्रवण संबंधी एवं संगीतीय प्रक्रियाओं में घनिष्ठ संबंध है। मानव मस्तिष्क आघात के उपचारार्थ संगीत के सफल प्रयोग से मस्तिष्क की अंतनिर्हित विशिष्ट योग्यताओं को उद्घाटित एवं विकसित करने की दिशा में संगीत एक सशक्त साधन हो सकता है। विद्यालय पाठ्यक्रम में कला शिक्षा विषय में संगीत को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

शिक्षा में संगीत का महत्त्व

संगीत को सामान्य शिक्षा क्षेत्र में ही नहीं अपितु विशिष्ट शिक्षा क्षेत्र में सम्मिलित कर हम मानसिक मंदता से पीड़ित, दृष्टिबाधित, मस्तिष्कीय, समस्याओं से ग्रसित, अधिगम बाधित, वाक्-बाधित, श्रवण बाधित एवं शारीरिक विकलांगता से ग्रस्त बालकों को शिक्षित किया जा सकता है। ऐसे विद्यार्थियों को संगीत के माध्यम से दी जाने वाली शिक्षा से सकारात्मक प्रभाव होता है तथा उनमें श्रवण, चिन्तन, वाचन एवं लेखन में योग्य होने की संभावना बढ़ती है।

ध्वनि केन्द्रित विद्या होने के कारण गंभीर श्रवण बाधित बालक के अतिरिक्त

सभी श्रेणियों के विशिष्ट बालक संगीत शिक्षा से लाभान्वित हो सकते हैं। ब्रेथवेट एवं सिगाफूस ने एक शोध के निष्कर्ष में बताया कि अधिक बाधित बालकों में भी संगीतमय शिक्षा के प्रयोग से उनकी सम्प्रेषण योग्यता में अतिशय सुधार होना पाया गया है। कठिन विषयों को रिकार्डेड वाद्य संगीत के उपयोग एवं स्वर, ताल, लय के माध्यम से रस, भावों, संवेगों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति करने लगते हैं। शिक्षक लय के साथ बालकों को वर्णमाला, गिनती, शब्द सिखा सकता है। इस पद्धति से बालक जल्दी हृदयंगम करता है और उसकी रुचि बनती है। संगीतमय गीत-गायन-नृत्य के माध्यम से ऐतिहासिक, धार्मिक चरित्रों की गाथाएँ हृदय पर गहरा प्रभाव डालती है। स्वाध्याय के साथ सुगम, धीमी गति एवं ध्वनि में रेडियो, ट्रांजिस्टर, मोबाइल अध्ययन में सहयोगी हैं और सुस्ती नहीं आने देते हैं।

संगीत का प्रभाव

संगीत सुख-दुख भरे जीवन का इन्द्रधनुष है। इनकी मौलिकता, विशेषता, आह्लाद, आह्वान और मर्म अपने ही निरालेपन में लवलीन रहता है। संगीत ज्ञान, व्यवहार, संस्कार और आदर्शों की निधि है। मानव जाति के विकास के साथ ही संगीत विद्या भी विकसित होती जा रही है। संगीत शिक्षा के पृथक विद्यालय, महाविद्यालय देश में स्थापित किये जा रहे हैं। वर्तमान में भारतीय संगीत के साथ पाश्चात्य संगीतधारा भी स्वीकार की जाने लगी है। संगीतज्ञ व्यक्ति प्राय: सहज होता है एवं विषय का भाव विभोर होकर प्रस्तुत करता है। जिसका प्रभाव श्रोताओं पर पड़ता है। संगीत की ताल, आरोह-अवरोह, लय व्यक्ति को मंत्रमुग्ध कर देती है। संगीत श्रवण से संज्ञानात्मक योग्यता में वृद्धि होती है, वे प्रसन्नचित्त होकर झूमते हैं, गुनगुनाते हैं। संगीत

संगीत को सामान्य शिक्षा क्षेत्र में ही नहीं अपितु विशिष्ट शिक्षा क्षेत्र में सम्मिलित कर हम मानसिक मंदता से पीड़ित, दृष्टिबाधित, मस्तिष्कीय, समस्याओं से ग्रसित, मंद विकास गति, अधिगम बाधित, वाक्-बाधित, श्रवण बाधित एवं शारीरिक विकलांगता से ग्रस्त बालकों को शिक्षित किया जा सकता है।

परम्परागत रूप से रोते हुए बच्चों को शांत करने, उन्हें सुलाने का लोकप्रिय तरीका रहा है। संगीत में वाद्ययंत्रों द्वारा रसाभिव्यक्ति में बांसुरी, ढ़ोलक, तबला, मृदंग, हारमोनियम, मंजीरा, झांझ, करताल, सितार, गिटार, माऊथ ऑर्गन, आदि से श्रोताओं पर स्थायी प्रभाव पड़ता है। कृष्ण की बांसुरी की धुन सुनकर जंगल में गाय, पशु-पक्षी, यहाँ तक कि गोपियाँ अपना काम छोड़कर जंगल में आ जाती थी। हेमा मालिनी जैसी नृत्यांगनाओं की संगीतमय नृत्यनाटिका से धार्मिक एवं ऐतिहासिक चरित्र कथाओं, घटनाओं का प्रदर्शन प्रभावी होता है। प्रसिद्ध संगीतज्ञ बैजूबावरा और तानसेन ने संगीत स्वरों द्वारा दीपक जलाने, वर्षा करने जैसे चमत्कार दिखाये हैं। सूरदास, रैदास, कबीर, मीरा बाई, रसखान, नानकदेव के गीत, भजन आज भी सस्वर गाये जाते हैं। अन्तरराष्ट्रीय खगोलीय संघ (आई.ई.ए.यू.) ने 2006 में ढूँढ़े गए लघुग्रह (माइनर प्लेनेट वी.पी. 32 संख्या 300128 को पं. जसराज शास्त्रीय संगीतकार के नाम पर समर्पित किया है। यह जसराज नामक ग्रह मंगल और बृहस्पति की कक्षाओं के बीच ब्रह्माण्ड की गतिविधियों के बारे में पता लगता है। यह संगीत का सम्मान है। महान संगीतकारों के समकक्ष पं. जसराज ऑस्ट्रिया के वोल्फगांग ओमेडेयूस मोजार्ट, जर्मनी के लुडविंग बॉन बीथोनन, ब्रिटेन के टेनॉर लुसियानी पवारोटी जैसे महान संगीतकारों के समकक्ष पहले भारतीय संगीतकार हैं।

डिजिटल म्यूजिक स्टडी 2019 का निष्कर्ष

भारतीय आमतौर पर संगीत सुनने में प्रति सप्ताह 19.1 घण्टे बिताते हैं। यह वैश्विक औसत 18 घंटे से अधिक है। यह तथ्य एक नये सर्वे में सामने आया है। देश में 16-64 वर्ष के संगीत उपभोक्ता रिकॉर्डेड संगीत के साथ सर्वे के अनुसार 80 प्रतिशत संगीत प्रेमी हैं। सर्वे के अनुसार 97 प्रतिशत लोग संगीत सुनने में स्मार्टफोन का उपयोग करते हैं। 62 प्रतिशत लोग एप के जरिये संगीत सुनते या वीडियो देखते हैं। 75 प्रतिशत लोग घर में आराम करते हुए संगीत सुनते हैं। 62 प्रतिशत लोग कार में संगीत का लुत्फ उठाते हैं। 45 प्रतिशत लोग रेस्टोरेन्ट या पब जैसी जगहों पर संगीत सुनते हैं। 39.4 प्रतिशत लोग ऑडियो स्ट्रीमिंग से सुनने पर 38.9 प्रतिशत वीडियो स्ट्रीमिंग पर संगीत सुनते हैं। इन दिनों में संगीत डी.जे. में बदलता जा रहा है। जुलूस, पदयात्रा या धार्मिक कार्यक्रमों में डी.जे. का चलन बढ़ता जा रहा है। बहुत ही तेज ध्वनि में डी.जे. के गीतों की धुन में बालक, युवा, महिलाएं नाचती हुई देखी जा सकती हैं। शादी में बारातियों का डीजे पर उत्साहपूर्वक नृत्य देखा जा सकता है। अस्तु कहा जा सकता है कि संगीत के साथ व्यक्ति अपने सभी भावों को विस्मृत होकर संगीत से जुड़कर आनन्द का अनुभव करता है। संगीत भटकते मन को एकाग्रचित्त कर आह्लादित करता है। ❑

संगीत शिक्षा व अभ्यास से भाषा कौशल विकसित होता है, आत्मसम्मान, श्रवण कौशल, गणितीय कौशल आदि का विकास होता है क्रिस्टोफर जॉनसन (Positive Behavior Report -2007) ने अपने परीक्षण में बताया कि उत्कृष्ट संगीत प्रोग्राम वाले विद्यार्थी ने कक्षा- परीक्षा में अधिक अंक अर्जित किए अन्य विद्यार्थियों की तुलता में जिनके पास सामान्य संगीत प्रोग्राम था।

मानसिक विकास व स्वास्थ्य का पोषक तत्त्व संगीत

प्रो. मधुर मोहन रंगा
पूर्व विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग संत गहिरा गुरु वि.वि. अम्बिकापुर, छत्तीसगढ

संगीत, भारतीय जीवन पद्धति में प्रत्येक स्तर पर अपना विशेष प्रभाव रखता है, यदि हम किसी सनातन धर्म के मंदिर की दर्शन समय सारणी का ध्यान करें तो प्रात: मंगला, श्रृंगार, राजभोग उत्थापन, संध्या आरती व शयन होती है यह एक जीवन पद्धति को भी दर्शाता है, परन्तु इसके साथ ही संगीतमय वातावरण भी प्राचीन भारतीय दर्शन का साक्षात्कार कराता है। जब भारतीय संगीत का स्मरण होता है, उस स्थिति में भारतीय वाद्ययंत्रों का स्मरण होना आवश्यक हो जाता है, जैसे सितार, सरोद, हारमोनियम, वीणा, तानपूरा, बाँसुरी, अलगोजा, तुरही, सिंगी, शहनाई, ढोलक, तबला, पखावज, डमरू, डफ, मादर, शंख, झांझ, नगाडा, घंटी, ठीरकी(टिमकी), इनके अतिरिक्त न जाने कितने पारम्परिक वाद्ययंत्र हैं, जिन्होंने प्रत्येक राज्य के लोक गीत व लोक संगीत को साकार करते हैं। संगीत का मन, मस्तिष्क, स्वास्थ्य, व्यवहार व अधिगम पर प्रभाव पड़ता है। प्रस्तुत आलेख में संगीत का मानसिक विकास व स्वास्थ पर पड़ने वाले प्रभावों को लिखने का प्रयास किया गया हैं। शास्त्रीय गायन ध्वनि प्रधान होता है, शब्द प्रधान नहीं, ध्वनि विषयक साधना के अभ्यस्त कर्ण ही इसे समझ सकते हैं इसी कारण इसका अधिगम में महत्त्व है। भारतीय शास्त्रीय संगीत परम्परा का श्रेय भरत मुनि को जाता है। उनके द्वारा लिखित नाट्यशास्त्र को भारतीय संगीत के इतिहास का प्रथम लिखित प्रमाण माना जाता है। भारतीय संगीत व गायन का ध्वनि प्रधान होना ही इसकी अधिगम में सार्थकता प्रमाणित करता है। भारतीय संगीत, गायन, वादन व नृत्य सभी में सात सुरों के सरगम का समावेश है। विभिन्न प्रकाशित शोध यह सिद्ध करते हैं कि संगीत का अधिगम, भाषा कौशल, गणित कौशल व सृजनात्मक शक्ति पर सकारात्मक प्रभाव होता है। साथ ही मानसिक स्वास्थ्य को ठीक कर मस्तिष्क को तनाव रहित करता है। अधिगम बालक की जन्मजात प्रकृति होती है, यह सतत् चलने वाली प्रक्रिया है, इसमें व्यक्ति नए-नए तथ्यों को ग्रहण करता है व नई-नई क्रियाओं को सीखता है। यह एक सृजनात्मक मानसिक क्रिया है, क्योंकि मानव मस्तिष्क में सर्व प्रथम जिज्ञासा उत्पन्न होती है, इसी के आधार पर विचारों का उदय, प्रवाह व परिष्कृत होना होता है, विचारों का सतत् मंथन ही अधिगम का आधार होता है। मस्तिष्क, दृश्य (visual) श्रवण (Aduitory), स्पर्श (Tactile), काइनेस्थेटिक (Kinesthetic)आदि प्रकारों के द्वारा सीखता है। उपर्युक्त अधिगम प्रकार का सान्निध्य बालक को सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से मिलता है। अत: बालक कार्यक्रमों के दृश्य, श्रवण व काइनेस्थेटिक गतिविधियों (Kinesthetic Activities) के द्वारा सीखता है। नृत्य की विधाओं में भाव-भंगिमा के द्वारा मन के भाव का प्रगटीकरण होता है। जिसमें स्वत: बालक भावों को ग्रहण कर लेता है। वाद्य यंत्रों को उपयोग में लेने वाला बालक उसे बजाना सीखता है यह अधिगम का व्यावहारिक पक्ष है। संगीत को सुनने वाला व्यक्ति उसके सूक्ष्म विभेदों को ग्रहण करता है व रागों के प्रति उसका झुकाव होने लगता है, इसी से एकाग्रता का विकास होता है। यही ''एकाग्रता'' अर्जित सूचनाओं को संचित करती है। यदि कक्षा-कक्ष में संगीतमय वातावरण बनाये रखा जाये तो बालकों के सीखने पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है, क्योंकि संगीत राग की बारीकियों को समझने का उसका स्वभाव बन गया है। (Chris Boyd, Brewer, Sound tracks for learning: using music in classroom 2007) गीत-संगीत (Sound Tracks) अभिरुचि को बढ़ाता है व सूचनाओं को मानसिक व भावनात्मक रूप से उत्तेजित करता है। संगीत अत्यधिक ध्यान केन्द्रित अधिगम अवस्था (Highlty focused learning state) बनाता है जिसमें शब्दावली व पाठन सामग्री को बालक तीव्र गति से ग्रहण कर सकता है।

जब सूचनाएँ ताल (Rhytyhm) व कविताओं (Rhyme) में होती हैं, उस स्थिति में संगीतयुक्त अवयव (Musical Element) इनकी पुनरावृत्ति में सहायक होते हैं। यही अधिगम का आधार होता है हम हमारे धार्मिक अनुष्ठानों में प्राय: देखते हैं कि अल्पवय बालक रामायण की चौपाइयों, भजन व मंत्रों का शुद्ध उच्चारण करता है, उन्हें कंठस्थ कर सभी श्रद्धालुओं के मन को जीत लेता है। जब बालक लगातार गीत संगीत के वातावरण में रहता है व लगातार अभ्यास करता है, उसका मस्तिष्क सूचनाओं को एकत्रित करता है ये मस्तिष्क में उपस्थित ''एनग्राम'' (Engram) में संचित हो जाती हैं, यह एक ''संज्ञानात्मक सूचनाओं'' (Cognitive Information) की एक इकाई है, इसमें स्मृति जैव रासायनिक (Bio Chemical) परिवर्तन के रूप में संचित हो जाती है मस्तिष्क के अतिरिक्त अन्य तंत्रिका ऊतक में भी संचित रह जाती है, बाह्य उद्दीपन पर पुन: स्मृति जाग्रत हो जाती है। यह दीर्घकालीन अधिगम (Longterm Learning) का आधार होती है। संगीत की सही धुन को सुनने से मन मस्तिष्क पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है (Chris Riotta feb. 2016) यह अधिगम में सहायक है। वाल्फगंग मोजार्ट (Walfgang Mozart) (1756-1791) ऑस्ट्रिया के शास्त्रीय संगीतकार जिन्होंने कक्षा- कक्ष में बालकों के सीखने की प्रवृत्ति को बढ़ाने के लिए शास्त्रीय संगीत को प्रोत्साहन दिया, उनके अनुसार संगीत से अधिगम, क्रियाशीलता, बुद्धिमत्ता व कल्पना शक्ति बढ़ती है। उन्होंने संगीत के स्वास्थ्य पर भी सकरात्मक पक्ष को उजागर किया है। 1998 में जार्जिया के राज्यपाल जेल मिलर (Zel Millar) ने उनके संगीत की सी.डी. को प्रत्येक विद्यालय में सुनने को अनिवार्य कर दिया व उसके लिए अतिरिक्त बजट का प्रावधान भी रखा, क्योंकि इनके संगीत का बच्चों के अधिगम प्रक्रिया पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, परन्तु हमारे यहाँ नीति बनाने वाले इस विषय को संज्ञान में कब लेंगे, यह विचारणीय है? रॉयल सोसायटी ऑफ मेडिसन (Royal Society of Medicine 1979) ने बताया कि मोजार्ट प्रभाव के कारण मस्तिष्क में इलेक्ट्रॉनिक आवेगों (Impulses) पर प्रभाव पड़ता है यह मस्तिष्क को उद्दीपन प्रदान करता है, जिससे स्मृति, एकाग्रता व संज्ञानात्मक गुणों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उन्होंने बताया की संगीत आधारभूत पोषक तत्त्व है मानसिक विकास व स्वास्थ्य का, भावनात्मक संकेतों के प्रदर्शन व तनाव रहित होने के लिए, संगीतमय ध्वनियों से मस्तिष्क की न्यूरोप्लास्टिसिटी (Neuroplasticity) पर प्रभाव पड़ता है जिससे तंत्रिका तंत्र श्रवण अवयवों (Audible Components), भाषण, शब्दावली, पाठन गुणवत्ता (Reading ability) व शब्द समझ के प्रति संवेदनशील हो जाता है, ये सभी अधिगम में सहायक तत्त्व हैं। मानव मस्तिष्क चेतन व अवचेतन (Conscious and Subconscious) अवस्था में रहता है। चेतना बाहरी व अवचेतन भीतरी मन अवस्था है। चेतन मन तर्क-वितर्क, विश्लेषण, आंकड़े व सूचनाओं का एकत्रीकरण करने का काम करता है जबकि अवचेतन मन सूक्ष्म है जहाँ हमारी पूर्व स्मृतियाँ बचपन की यादें, घटनाएँ, दृश्य, श्रवण आदि अंकित रहते हैं। चेतन मन बाहर का प्रबंधक है जबकि अवचेतन मन भीतर का प्रबंधक है, दोनों में द्वंद्व की स्थिति में निर्णय लेना दुष्कर हो सकता है। चेतन मन की सीमाएँ हैं जबकि अवचेतन मन असीमित है। परन्तु दोनों ही मन:स्थितियों का अधिगम पर प्रभाव पड़ता है चेतन मन, अधिगम को आधुनिक आधार प्रदान करता है, जबकि अवचेतन मन अधिगम में विद्या को प्रोत्साहन देता है। जब दोनों मन:स्थितियों में व्याकुलता आ जाती है, उस परिस्थिति में संगीत-ध्वनियाँ इस व्याकुलता की स्थिति को खुशी प्रदान करने का कार्य करती हैं, इसी प्रसन्नता के फलस्वरूप व्यक्ति का मस्तिष्क अधिक कार्य केन्द्रित हो जाता है, यह भी अधिगम को सम्बल प्रदान करते हैं।

संगीत शिक्षा व अभ्यास से भाषा कौशल विकसित होता है, आत्मसम्मान, श्रवण कौशल, गणितीय कौशल आदि का विकास होता है क्रिस्टोफर जॉनसन (Positive Behavior Report -2007) ने अपने परीक्षण में बताया कि उत्कृष्ट संगीत प्रोग्राम वाले विद्यार्थी ने कक्षा- परीक्षा में अधिक अंक अर्जित किए अन्य विद्यार्थियों की तुलता में जिनके पास सामान्य संगीत प्रोग्राम था। उपर्युक्त विवरण संगीत का अधिगम पर पड़ने वाले प्रभाव का एक वैज्ञानिक पक्ष प्रस्तुत करता है। परन्तु आज भी यह चिंता का विषय है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत जिसे आस्ट्रिया के संगीतकार मोजार्ट ने अधिगम का आधार बनाया, परन्तु हमारे देश में हमारा संगीत दयनीय स्थिति में है। प्राचीन काल में घराने औपचारिक-संगीत शिक्षा के केन्द्र थे परन्तु ब्रिटिश काल के आविर्भाव के बाद इन घरानों पर प्रहार होने लगा क्योंकि संगीत शिक्षा से अध्यात्म की शिक्षा भी प्राप्त होती थी जो अधिगम व मानसिक स्वास्थ्य का मूल है। अत: आज आवश्यकता है कि भारतीय संगीत के वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, व्यावहारिक व आध्यात्मिक पक्ष को पुनरपि स्थापित कर संगीत-शिक्षा को अनिवार्य विषय बनाए तभी विद्यार्थी अधिगम चरम स्थिति में होगा। क्योंकि संगीत मानसिक विकास व स्वास्थ्य का पोषक तत्त्व है।❑

कथक का आधार: आर्ष महाकाव्य

पद्मजा रंगा
कथक नृत्यांगना
अजमेर

भारत विभिन्नता में एकता को समाहित रखने वाला देश है इसी कारण यहाँ कला, शिल्प, मूर्त व अमूर्त सांस्कृतिक विधि विभिन्न स्वरूपों में सामने आती है। कला व नृत्य का एक ही स्वरूप अलग-अलग जगहों पर अपनी विशेषता के कारण मनमोहक बन जाता है। अलग-अलग मुद्रा एक विभिन्न शास्त्रीय नृत्य का रूप धारण कर लेती है व देश के अलग-अलग राज्यों के शास्त्रीय नृत्य बन जाते हैं। इनमें भरतनाट्यम, कथक, कथकली, कुचिपुडी, मणिपुरी, मोहिनीअट्टम, ओडिसी व सत्रिया प्रमुख हैं। प्रत्येक नृत्य की प्रस्तुति में विभिन्न कलाकारों का सहयोग, समन्वय, सम्पर्क रहता है तभी नृत्य का वास्तविक रूप साकार होता है। यह भी एक उत्सव व समारोह का ही पर्याय है। नृत्य से जीवन में एकत्व के भाव में अनवरतता, निरन्तरता व जीवन्तता उदय होती है। शास्त्रीय नृत्य प्राचीन भारतीय परम्पराओं, इतिहास व धार्मिक ग्रंथों से जोड़ता है। इस में गुरु-शिष्य परम्परा ही सर्वोपरि है। नृत्य वैदिक काल से ही चला आ रहा है। इसमें मंत्रों का उच्चारण, गायन व संवाद प्रमुख आयाम होते हैं। भरतनाट्यम तमिलनाडु, कथक-उत्तर प्रदेश, राजस्थान, कथकली-केरल, कुचिपुड़ी-आंध्रप्रदेश, मणिपुरी-मणिपुर, ओड़िसी-उड़ीसा, सत्रिया आसाम व मोहिनी अट्टम-केरल का शास्त्रीय नृत्य है। प्रस्तुत आलेख में कथक का संक्षिप्त वर्णन लिखा है। यह उत्तर भारत का शास्त्रीय नृत्य है, इसका शब्दिक अर्थ है कथा को नृत्य के साथ कहना इसकी उत्पत्ति 'कथक' से हुई है, 'कथा करोति' 'कथक' अर्थात् जो कथा करता है। इसमें अभिनय के माध्यम से कथा को प्रस्तुत करना है यह प्राचीन परम्परा है, मोहनजोदड़ो व हड़प्पा की खुदाई में कथक करती मूर्तियाँ मिली थी। जो इसके प्राचीन होने का प्रमाण है। प्राचीन ग्रंथों में भी इसका वर्णन है। भारतीय हिन्दी सिनेमा में नृत्य इसी शैली पर आधारित है। प्राचीन समय में मंदिरों में महाकाव्यों और पौराणिक कथाओं से कहानियों को नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता था। नृत्य करने वाले व साथ देने वाले सभी कई पीढ़ियों से इसी प्रतिभा को संजोकर रखते व स्वयं की पीढ़ियों में इस कला का सम्प्रेषण करते थे इसलिए नृत्य वंशानुगत थे। इन्हें प्रस्तुत करने वाले कथाकास कहलाते थे। कमलेश्वर (मिथिला) के पुस्तकालय में इनके साहित्यिक सन्दर्भ मिलते हैं। धीरे-धीरे इस नृत्य में निश्चित शैली का विकास होने लगा, तकनीकी दृष्टि से संगीत उपकरणों का उपयोग होने लगा। भक्ति काल के समय जब सम्पूर्ण देश में धार्मिक वातावरण था उस कालखण्ड में रासलीला पर कथक का प्रभाव पड़ा, नृत्य मंदिरों का प्रमुख पर्व बन गया। यह नृत्य राधा कृष्ण के जीवन पर आधारित विभिन्न प्रसंगों को लेकर मंचन करने लगा। श्री कृष्ण की बाल लीलाओं को भी कथा व नृत्य के साथ दर्शाया जाने लगा। भारतीय प्राचीन ग्रंथों के प्रसंगों की कथाओं की नृत्य की भाव भंगिमाओं के साथ प्रस्तुति होने से सम्पूर्ण काव्य में भारतीय प्राचीन ग्रन्थों के प्रसंगों का जीवन्त दर्शन मानस पटल पर होने से दर्शक मंत्रमुग्ध हो कर उसे देखकर अपने आपको भाग्यशाली मानने लगते हैं। नृत्य प्रदर्शन में नृतः, ठाट, आमद, कवित, पड़न, परमेलु, गत, लडी, तिहाई व नृत्य आते हैं। कथक में विभिन्न घराने हैं जैसे

लखनऊ घराना- इस नृत्य में लखनऊ शैली के कथक नृत्य में सुन्दरता, कलात्मक रचनाएँ, ठुमरी व आशु रचनाओं जैसी भाव पूर्ण शैली होती है। पं.बिरजु महाराज इसके प्रमुख प्रतिनिधि माने जाते हैं। जयपुर घराना- कथक-राजस्थान के कच्छावा राज्य दरबार में इसका प्रादुर्भाव हुआ, इसमें प्रभावी ततकार विभिन्न ताल, अधिक चक्कर में जटिल रचनाओं के रूप में नृत्य में तकनीकी पक्ष प्रभावी होता है, यहाँ पखावज (तबला) का उपयोग होता है, जयपुर प्राचीनतम कथक घराना है। बनारस घराना-श्री जानकी दास ने इसे ऊचाइयाँ प्रदान की, यहाँ नटवरी का उपयोग होता है। पखावज-भी नृत्य की शोभा बढ़ाता है। यह उत्तर-भारतीय शैली का तबला है, परन्तु इसका उपयोग कम होता है यहाँ ठाट व ततकार में अंतर होता है, कम चक्कर दायें एवं बायें दोनों ओर से लिया जाता है। रायगढ़ घराना-छत्तीसगढ़ के राजा श्री चक्रधर सिंह ने इसकी स्थापना की थी इसमें अलग-अलग पृष्ठ भूमि की अलग-अलग शैलियाँ व कलाकारों के संगम व पखावज (तबला) रचनाओं से अनुपम परिदृश्य बनता है पं. फिर्तु महाराज, पं. कार्तिक राम, पं. कल्याण दास व पं. बरमानलक इसके प्रसिद्ध पारखी हैं।

कथक अपनी पारम्परिक वेशभूषा में किया जाता है- नृत्य में घुंघरुओं का प्रयोग इसे आकर्षक बनाता है नर्तक ठाट, तोड़े, परन, टुकड़े के साथ भाव एवं अभिनय से कथक कला की अभिव्यक्ति दर्शकों को भाव विभोर कर देती है। इस नृत्य में पैरों एवं पैरों में बंधे घुंघरुओं से ध्वनि उत्पन्न होती है उसे ततकार कहते हैं, इसका सर्वाधिक महत्त्व है। ता, थे, ई, इन नृत्य के वर्गों से बनी छन्द रचना को ततकार कहते हैं, इसके द्वारा नृत्यकार विभिन्न लयकारी एवं बोलों को प्रस्तुत करता है। ठाट-नृत्य प्रारम्भ करने के प्रकार को कहते हैं, इसका

भक्ति काल के समय जब सम्पूर्ण देश के धार्मिक वातावरण था उस कालखण्ड में रासलीला पर कथक का प्रभाव पड़ा, नृत्य मंदिरों प्रमुख पर्व बन गया। यह नृत्य राधा कृष्ण के जीवन पर आधारित विभिन्न प्रसंगों को लेकर मंचन करने लगा। श्री कृष्ण की बाल लीलाओं को भी कथा व नृत्य के साथ दर्शाया जाने लगा। भारतीय प्राचीन ग्रंथों के प्रसंगों की कथाओं को नृत्य की भाव भंगिमाओं के साथ प्रस्तुति होने से सम्पूर्ण काव्य में भारतीय प्राचीन ग्रन्थों के प्रसंगों का जीवन्त दर्शन मानस पटल पर होने से दर्शक मंत्रमुग्ध हो कर उसे देखकर अपने आपको भाग्यशाली मानने लगते हैं।

शाब्दिक अर्थ है, आकार है, इसमें नर्तक, नृत्य की सम्पूर्ण रूपरेखा को प्रस्तुत करता है, वह मुखड़े, टुकड़े, तिहाई आदि से नेत्र, भौंएँ, गर्दन आदि का लयबद्ध एवं तालबद्ध संचालन करता है। आवर्तन किसी भी ताल की पूरी मात्राएँ एक आवर्तन होता है, ठेका- किसी भी ताल के विशेष बोल को ठेका कहते हैं, ठेके का बोल ताल की पहचान होती है इसे तबला (पखावज) पर ही बजाया जाता है, सम- ताल की पहली मात्रा को सम कहते हैं यह उस ताल की पहली ताली भी होती है, ताली-खाली-प्रत्येक ताल के विभागों को सूचित करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। लयकारी- लय के विभिन्न भेद होते हैं जिन्हें लयकारी कहते हैं। तिहाई- किसी भी वर्ण समूह या सूक्ष्म बोल को तीन बार नाच कर सम पर आये उसे तिहाई कहते हैं। दस्तक-ताल-लय के साथ हस्त संचालन को हस्तक कहते हैं। नृत्य के विभिन्न घरानों में यह भिन्न तरीके से विकसित हैं, सलामी - इसका अभिप्राय नमस्कार है जब नृत्यकार तोड़े या टुकड़े को नृत्य कर सम पर नमस्कार करने का भाव दिखाता है। कथक में टुकड़ों को वैज्ञानिक आधार पर बनाया है। आमद- नृत्य में ठाट के बाद अभिनय किया गया, पहला बोल आमद कहलाता है। तोड़ा-नृत्य के वर्ण जैसे ता, थेई, तत, दिग आदि से बनी हुई ताल बद्ध रचना को कम से कम एक आवर्तन की हो, तोड़ा कहते हैं। ताल- नृत्य के समय मापने के पैमाने को ताल कहते हैं, लय गान, वादन व नृत्य में समय की गति को लय कहते हैं। मात्रा- संगीत शास्त्र में समय की सबसे सूक्ष्म इकाई मात्रा कहलाती है।

कथक नृत्य को सीखने के लिए विद्यार्थियों को हमारे प्राचीन शास्त्र का अध्ययन आवश्यक है। इस प्राचीन भारतीय नृत्य को विश्व पटल पर स्थान दिया है। हमारे प्रेरणा स्रोत बिरजू महाराज, सोनल मानसिंह, मल्लिका साराभाई, रुक्मणी देवी, उदय शंकर, यामिनी कृष्णामूर्ति के प्रति आभार, इनके योगदान से ही भारतीय शास्त्रीय नृत्य हमारी धरोहर होते हुए भी वैश्विक स्तर पर अपनी आभा बिखेर रहा है। मेरा मत है कि इस कला को अधिक से अधिक प्रोत्साहन मिले व प्राथमिक से उच्च शिक्षा स्तर तक इसे पढ़ाया व सिखाया जाय। तभी भारत एकता के सूत्र में अधिक सुदृढ़ होगा, साथ ही राष्ट्रीयता व स्वाभिमान प्रखर होगा।❑

भारतीय संगीत और पाश्चात्य संगीत

श्रीमती दीप्ति चतुर्वेदी
सहायक आचार्य -राजनीति विज्ञान, राज. बांगड स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पाली

संगीत हमारी प्रकृति का वरदान है, जिसे मानव ने अपनी अनुभूतियों एवं प्रयोगों से प्राप्त किया है। संगीत से आनंद स्वरूप साक्षात परमात्मा की प्राप्ति होती है, जन मानस के चेतन मानस पटल पर संगीत प्रकट भगवत् रूप है, इसीलिए संगीत को 'ब्रह्मानंद सहोदर' की संज्ञा देकर संबोधित किया जाता है। संगीत से जो तन्मयता प्राप्त होती है वह अपूर्व शांति का आभास कराती है। संगीत आत्मबल के निर्माण, मानवीय भावनाओं को सर्वोत्तम, परिष्कृत और पवित्र बनाने, मानव जीवन को उच्च स्तर तक ले जाने तथा विकासशील जीवन के संस्कारों का सार्थक प्रेरणा स्रोत है।

संगीत मानव मन का शुभ और दिव्य प्रवाह है, जिसमें मन के समस्त विकारों की निवृत्ति तथा कलुषता धुल जाती है। संगीत भावनाओं की अभिव्यक्ति द्वारा असुंदर को सुंदर, असहज को सहज तथा क्लिष्ट को सरल बनाने वाली प्राणदायिनी गंगा है।

पाश्चात्य संगीतज्ञों के अनुसार यदि संगीत की परिभाषा पर ध्यान दिया जाए तो ज्ञात होगा कि स्वरों का वह मिश्रण जो कि भावनाओं को प्रभावित करे, संगीत कहलाता है। भारतीय संगीतज्ञों की दृष्टि में गायन, वादन और नृत्य तीनों के एकीकरण को संगीत कहते हैं। गायन और नृत्य में तो भावनाओं की प्रधानता होती है, वादन में भी जो संगीत प्रस्तुत किया जाता है। वह राग कहलाता है। इस प्रकार संगीत की परिभाषा चाहे वह पाश्चात्य दृष्टिकोण से ली गई हो अथवा भारतीय दृष्टिकोण से दोनों का लक्ष्य मनुष्य की भावनाओं को प्रभावित करना है। प्रस्तुत आलेख में हम भारतीय संगीत और पाश्चात्य संगीत में मुख्य भेदों पर विचार करेंगे।

संगीत की उत्पत्ति के संबंध में अधिकतर मत धार्मिक किंवदंतियों पर आधारित हैं, यद्यपि यह किंवदंतियाँ इतिहास के पृष्ठों पर पूरी तरह खरी नहीं उतरती। परंतु संगीत के अवतरण का कोई ऐतिहासिक प्रमाण भी नहीं है। प्राचीन भारतीय ऋषि-मुनियों ने सृष्टि की उत्पत्ति नाद से मानी है। वे मानते हैं, कि ब्रह्मांड की प्रत्येक चराचर वस्तु में नाद व्याप्त है। प्राचीन भारतीय परंपरा मानती है कि संपूर्ण जगत् ही अदृश्य रूप से संगीतमय है। संगीत के स्वर की अविरल धारा सभ्यता के सभी चरणों में किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान है, जिससे इसकी प्राचीनता दृष्टिगत होती है।

संगीत की उत्पत्ति के संबंध में अधिकतर मत धार्मिक किंवदंतियों पर आधारित हैं, यद्यपि यह किंवदंतियाँ इतिहास के पृष्ठों पर पूरी तरह खरी नहीं उतरती। परंतु संगीत के अवतरण का कोई ऐतिहासिक प्रमाण भी नहीं है। प्राचीन भारतीय ऋषि-मुनियों ने सृष्टि की उत्पत्ति नाद से मानी है। वे मानते हैं, कि ब्रह्मांड की प्रत्येक चराचर वस्तु में नाद व्याप्त है। प्राचीन भारतीय परंपरा मानती है कि संपूर्ण जगत् ही अदृश्य रूप से संगीतमय है।

ऐसा माना जाता है कि भारतीय संगीत का उद्भव वेदों से हुआ है। जिनमें ब्रह्मा द्वारा नारद जी को संगीत वरदान में देने का उल्लेख है, ज्ञान एवं कला की देवी माँ वीणावादिनी स्वयं हाथों में वीणा को सुशोभित करती हैं। भारतीय संगीत मात्र कला नहीं आस्था एवं आध्यात्मिकता का प्रतीक है। पाश्चात्य संगीत, भारतीय संगीत की तुलना में नया है। ऐसा माना जाता है कि रोमन काल में चर्च में प्रार्थना को रोचकता प्रदान करने के लिए संगीत प्रचलन में आया। सात सुरों एवं राग-रागिनी से सुसज्जित भारतीय संगीत गौरवशाली इतिहास को परिलक्षित करता है।

संगीत के जन्म की पाश्चात्य किंवदंती के अनुसार, एक बार ईसा मसीह कहीं से घूम कर आ रहे थे और रास्ते में थक जाने के कारण एक शीतल वृक्ष की छाया में विश्राम करने लगे। कुछ देर बाद उनकी आँख लग गई। जब वे सो कर उठे तो उन्होंने ऐसा मधुर स्वर सुना, जो पहले कभी सुनाई नहीं दिया था। ऐसे में वे सोचने लगे कि क्या कोई स्वर इतना मीठा और आकर्षक हो सकता है। वह मधुर स्वर इतना मंत्रमुग्ध कर देने वाला था कि ईसा मसीह झूम-झूम कर नाचने लगे। नाचते-नाचते उनकी दृष्टि वृक्ष पर पड़ी, वहाँ रंगीन पुष्पों के बीच एक सुंदर चिड़िया आलाप कर रही

थी। ईसा मसीह ने स्वर का पूर्ण अनुकरण कर लिया। जिस पेड़ के नीचे ईसा मसीह बैठे। उसका नाम अलगोजा रखा गया, तथा जिस चिड़िया का मधुर स्वर उन्होंने सुना, उसको लिंडा नाम दिया गया। इसीलिए अलगोजा को संगीत का कल्पवृक्ष मान लिया गया और लिंडा को संगीत की जन्मदात्री मान लिया गया और ईसा मसीह के झूमने को नृत्य कह दिया गया। इस प्रकार ईसा मसीह ने ही विश्व को पहली बार संगीत का ज्ञान कराया। बाद में ईसा मसीह के स्वरों का विकास होता गया और वह देश-देशांतरों में पहुँचकर विभिन्न साँचों में ढल गया।

पाश्चात्य संगीत और भारतीय संगीत में बहुत अधिक अंतर है। पाश्चात्य संगीत हॉरमनी पर आधारित है जबकि भारतीय शास्त्रीय संगीत मेलोडी पर। हॉरमनी में वाद्य प्रधान है, जबकि मेलोडी में कंठ। पश्चिम का संगीत वाद्यों के अतिरेक से पैदा हुआ, एक सामूहिक नाद है, जबकि भारतीय शास्त्रीय संगीत नाद ब्रह्म की साधना है। जो सिर्फ मनोरंजन के लिए नहीं वरन सत, चित्त, आनंद से साक्षात्कार करने के लिए है।

भारतीयों ने संगीत को आत्मोन्नति का एक श्रेष्ठ साधन माना है, और इसीलिए इसे धर्म से संबंधित कर दिया। फलस्वरूप समस्त भारतीय उत्तम संगीतज्ञ प्रथम श्रेणी के भक्त और संत थे। उनका संगीत दूसरों के लिए न होकर अपने लिए था। इस प्रकार वह एकाकी बन गया और एक कंठ से केवल मेलोडी ही उत्पन्न हो सकती है, इसीलिए हिंदुस्तानी संगीत में हॉरमनी का प्रवेश नहीं हो सका। वहीं दूसरी ओर पाश्चात्य संगीत किसी व्यक्ति विशेष को न लेकर सामूहिक मनोरंजन के उद्देश्य से उत्पन्न हुआ। उसमें एक से अधिक लोगों ने भाग लिया। इसीलिए यहाँ एक साथ एक से अधिक स्वर ही नहीं वरन धुन भी सुनाई देने लगी। फलस्वरूप इसमें मेलोडी के स्थान पर हॉरमनी की प्रमुखता रही। इस प्रकार भारतीय संगीत का

पाश्चात्य संगीत हॉरमनी पर आधारित है जबकि भारतीय शास्त्रीय संगीत मेलोडी पर। हॉरमनी में वाद्य प्रधान है, जबकि मेलोडी में कंठ। पश्चिम का संगीत वाद्यों के अतिरेक से पैदा हुआ एक सामूहिक नाद है, जबकि भारतीय शास्त्रीय संगीत नाद ब्रह्म की साधना है। जो सिर्फ मनोरंजन के लिए नहीं वरन सत, चित्त, आनंद से साक्षात्कार करने के लिए है।

स्वरूप आध्यात्मिक रहा और पाश्चात्य संगीत का लौकिक। साथ ही भारतीय संगीतकार को गायन वादन में एक प्रकार की स्वतंत्रता रही। वहीं पाश्चात्य संगीतकार को हॉरमनी के कारण परतंत्रता के घेरे में रहना पड़ा।

भारतीय संगीत का निर्माण चेतना को परिष्कृत कर मनुष्य को शाश्वत आनंद देने की तरफ है। इसके तमाम राग, वाद्य मनुष्य के दैनिक जीवन से जुड़े हैं। यह सिर्फ दिन रात ही नहीं, यह रोग शोक, पीड़ा, उदासी का साथी है। मसलन कि उदासी में चुना गया मारवा राग, दुख को गहरा कर देता है। लेकिन आनंद के क्षणों में राग बहार सुना जाए तो आनंद दुगना हो जाता है। सुबह की शुरूआत राग भैरवी से हो तो सुबह और सुंदर हो जाती है, शाम को यमन बजे तो नदी में डूबता सूरज और प्यारा लगता है। भारतीय संगीत मौलिक है एवं सुरों के आधार पर नवीनता इसका प्रमुख गुण है। पाश्चात्य संगीत में सब कुछ पहले से तय होता है यह कंपोजीशन के प्रशिक्षण पर आधारित है। पाश्चात्य संगीत कुछ पल का उफान है, यह सिर्फ उत्तेजित करता है, इसमें वह गहराई और गंभीरता नहीं है जो भारतीय शास्त्रीय संगीत में है।

पाश्चात्य और भारतीय संगीत की अनेक बड़ी असमानता में से एक यह भी है कि जहाँ पाश्चात्य संगीत में स्वरों का प्रयोग सीधे और खड़े रूप में होता है वही भारतीय संगीत में लगभग प्रत्येक स्वरकण, जमजमा, मुरकी, भीड़, सूत, घसीट, गमक इत्यादि में से किसी न किसी प्रकार से अवश्य सजा हुआ रहता है। यद्यपि रचना करना मनुष्य की प्रमुख भावना है परंतु साधारणतया अधिकांश पाश्चात्य संगीतकार या तो उत्तम रचना करने में स्वयं को अशक्त पाते हैं व अन्य विद्वानों की रचनाओं को बजाते हैं या उनके संगीत निर्माण के सिद्धांत ऐसे जटिल हैं कि संगीत की रचना करना उनके बस का काम नहीं है। कुछ भी हो जब पाश्चात्य संगीतज्ञ अन्य विद्वानों की रचनाओं को बजाते हैं तो वे स्वयं की भावनाओं को प्रस्तुत करने के स्थान पर रचयिता की भावनाओं को ही प्रस्तुत करते हैं। इसीलिए पाश्चात्य संगीत में रचना करने वाले संगीतज्ञ को ही विशेष महत्व दिया जाता है न कि वादक को। इसके विपरीत भारतीय संगीतकार अपने गुरु परंपरागत संगीत और गायकी द्वारा स्वनिर्मित संगीत को प्रस्तुत करने की क्षमता रखते हैं। इस प्रकार भारतीय संगीतकार को जो संतोष की भावना प्राप्त होती व पाश्चात्य संगीतकार को नहीं, इसीलिए आज के प्रसिद्ध संगीतकार भारतीय संगीत को सीखने को उत्सुक हैं।❑

संस्कृत वाङ्मय में संगीत विज्ञान

डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय
सह-आचार्य, संस्कृत
राजकीय महाविद्यालय, बून्दी

जगन्नियन्ता सृष्टिकर्ता परमपिता की यह अनादि संरचना अपनी रहस्यमयता के कारण स्वत: ही त्रैकालिक विचित्र है। किंच महामोहान्धकाराच्छादित इस अनन्त संसार में प्राणीमात्र (चेतनधर्मा) चाहे वह स्थावर हो या जङ्गम, आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक त्रिविध संताप से सन्तप्त होने को विवश है। इसी दु:खत्रय से निवृत्ति पूर्वक सुखाधिगम की प्रवृत्त्यर्थ विशेषकर अन्तिम पुरुषार्थ मोक्षात्मक आनन्दावाप्ति हेतु प्रवृत्त होना प्राणी मात्र का स्वाभाविक धर्म है। विधाता ने भी समस्त चेतनधर्मा को पूर्णता के साथ सुखपूर्वक जीने के लिए किसी भी वस्तु या साधन का अभाव नहीं किया है। परमेश्वर प्रदत्त उन साधनों में से अन्यतम है संगीत। संगीत न केवल मानव जीवन, अपितु स्थावर जङ्गमात्मक संपूर्ण प्राकृतिक सृष्टि की आत्मा है। संगीत के बिना किसी जैविक सत्ता की परिकल्पना भी असम्भव है। क्योंकि ब्रह्माण्ड के संपूर्ण जड़-चेतन में नाद तत्त्व व्याप्त है। संगीत का दूसरा नाम नाद-ब्रह्म है। यही नाद-ब्रह्म ही अक्षर-ब्रह्म संज्ञाधायक 'ओङ्कार' है, जो सृष्टि का बीज स्वरूप परमात्मा है। जैसा कि श्रीमद्भगवद्गीता में कह गया है

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्।
य: प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम्।।
(गीता 8.13)

संगीतमूल नादस्वरूपात्मक शब्दब्रह्म की प्रकाशात्मकता की चमत्कारपूर्ण महिमा का प्रमाण हमें अलङ्कारशास्त्री आचार्य दण्डी के निम्नाङ्कित उद्धरण से भी प्राप्त होता है-

इदमन्धतम: कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम् ।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारान्न दीप्यते।।
(काव्यादर्श 1.4)

संगीत की सृष्टि का रहस्य उतना ही प्राचीन है, जितना कि न केवल मानवीय सभ्यता और न केवल पार्थिव सत्ता अपितु संपूर्ण ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का रहस्य। मानव जीवन के लिए संगीत का कितना महत्त्व है, हमें भर्तृहरि की निम्नाङ्कित सदुक्ति से स्पष्ट हो जाता है -

साहित्यसंगीतकलाविहीन:
साक्षात्पशुपुच्छविषाणहीन: ।
तृणं न खादन्नपि जीवमान:
तद्भागधेयं परमं पशूनाम् ।।(नी.श. 12)

प्रस्तुत पद्य के माध्यम से क्रान्तदर्शी कवि का यह आशय है कि मनुष्य को मनुष्यत्व के साथ जीना है तो उसे साहित्य व कला ज्ञान के साथ स्वयं के मनुष्यत्व में संगीत को आत्मसात् करना होगा। इसके अतिरिक्त पशु के पशुत्व व उसके मनुष्यत्व में कोई अन्तर ही नहीं रहेगा।

संगीत शब्द की व्युत्पत्ति सम् उपसर्ग पूर्वक 'गै' धातु से क्त प्रत्यय हो कर सिद्ध होती है। 'सम्यग् रूपेण गीयते इति संगीतम्' अर्थात् जो अच्छी तरह गाया जाता है यानी जिससे प्रत्येक चेतनधर्मा आह्लादित होता है वह संगीत है। इस प्रकार विद्वानों के निर्वचनानुसार संगीत वह कहलाता है, जो सुव्यवस्थित ध्वनि, आस्वाद स्वरूपात्मक रस की उत्पत्ति में समर्थ हो। संगीत की एक सर्वमान्य परिभाषा हमें निम्नाङ्कित वाक्य से प्राप्त होती है–

'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते।'

(संगीत रत्नाकर)

शास्त्रीय संगीत का मूल स्रोत सामवेद है। 'साम' का अर्थ है– स्वर का गायन। सामवेद संगीतात्मक होने के कारण ही योगेश्वर संगीत सम्राट् भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है– 'वेदानां सामवेदोऽस्मि' (गीता 10.22)। सामवेद के मूलस्रोतत्व की सिद्धि आचार्य भरत मुनि के वचन से भी हो जाती है–

जग्राह पाठ्यं ऋग्वेदात्सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ।।

(ना.शा. 1.17)

इतना ही नहीं, अपितु नारदीय शिक्षा (मन्त्र सं.1.5.3 व 1.5.4) के अनुसार साम स्वरों का उत्पन्न ऋतुओं के अनुसरण में पशु-पक्षिओं की ध्वनि से हुआ है। सामवेद के इस स्वरसप्तक विधान को हम अधोवर्णित सारिणी में देख सकते हैं –

परमेश्वर प्रदत्त उन साधनों में से अन्यतम है संगीत। संगीत न केवल मानव जीवन, अपितु स्थावर जङ्गमात्मक संपूर्ण प्राकृतिक सृष्टि की आत्मा है। संगीत के बिना किसी जैविक सत्ता की परिकल्पना भी असम्भव है। क्योंकि ब्रह्माण्ड के संपूर्ण जड़-चेतन में नाद तत्त्व व्याप्त है। संगीत का दूसरा नाम नाद-ब्रह्म है। यही नाद-ब्रह्म ही अक्षर-ब्रह्म संज्ञाधायक 'ओङ्कार' है, जो सृष्टि का बीज स्वरूप परमात्मा है।

इस प्रकार संगीत के मूल में निहित स्वर विज्ञान का महत्त्व एवं उपादेयत्व सर्वथा अनिर्वचनीय है क्योंकि स्वर विज्ञान के समुचित ज्ञान से अर्थावबोधन का मार्ग उसी प्रकार प्रशस्त होता है, जिस प्रकार हाथ में दीपक लिये कोई व्यक्ति घने अन्धकार को भेद लेता है। इस सन्दर्भ में निम्नांकित मन्त्र दृष्टव्य है –

साम संगीत का नाम	चिह्न/ प्रतीक	साम वेद का स्वर	पशु-पक्षी के ध्वनि
मध्यम	मा	स्वरित	मृग (हिरण)
गंधार	गा	उदात्त	अजा (बकरी)
रिषभ	रे	अनुदात्त	वृषभ
षड्ज	सा	स्वरित	मयूर
निषाद	नि	उदात्त	हस्ती
धैवत	धा	अनुदात्त	अश्व
पंचम	पा	स्वरित	कोकिल

अन्धकारे दीपिकाभिर्गच्छन्न स्खलति क्वचित्।
एवं स्वरैः प्रणीतानां भवन्त्याः स्फुटा इति।।

(स्वरानुकमणी 1.8.2)

इस प्रकार संगीत शास्त्र न केवल ज्ञान व विज्ञान का प्रमुख स्रोत है, अपितु मानवीय संवेदना का परिचायक यह संपूर्ण चराचर जैविक सत्ता के साथ तादात्म्य भाव से संश्लिष्ट है। क्योंकि परमपिता ने जीवन को सरस, रुचिकर एवं सौख्यपूर्ण बनाने के लिए जो एक अपूर्व साधन दिया है, वह है संगीत। चाहे वह कण्ठ्य संगीत हो या वाद्य संगीत। संगीत के इसी वैशिष्ट्य के आत्मावबोधन के परिणाम स्वरूप ही प्राच्य मनीषा ने वैदिक साहित्य से ले कर लौकिक साहित्य तक संस्कृत के अनन्त वाङ्मय में संगीत की सत्ता को अभिन्न अङ्ग बनाया है।

वाल्मीकि रामायण में संगीत मानों दैनिक जीवन का एक अङ्ग प्रतीत होता है। नागरिक, राजा, तपस्वी, आर्य, वानर, राक्षस सभी संगीतप्रेमी जान पड़ते हैं। मार्ग, गलियां, चतुष्पथ, भवन, उद्यान सर्वत्र ही समय-समय पर संगीत की गुंजार प्रसृत रहती है। धरती की सर्वश्रेष्ठ सुन्दर नगरी अयोध्या में विविध वाद्यों की सुमधुर ध्वनि गूंजती ही रहती थी (वाल्मीकि रा. 1.5.18)। राम के जन्मोत्सव के अवसर पर गन्धर्वो ने मधुर गीतों का गायन किया– 'जगुः कलं च गन्धर्वाः (रामायण 1.8.17)। इतना ही नहीं, अयोध्या की गलियां भी गायन से गूंजने लगीं 'रथ्या... गायनैश्च विराविण्यः (रा. 1.18.19)। सीता का अन्वेषण करते हुए हनुमान जब लंका में विचरण कर रहे थे, तब उन्होंने मंद्र, मध्यम तथा तार (उच्च) स्वरों से उत्पन्न सुरुचिर गीतों का श्रवण किया– 'सुश्राव रुचिरं गीतं त्रिस्थानस्वर-भूषितम्' (रामा. 5.4.10)7 रामायण के अनेक स्थानों पर प्रकृति के विभिन्न अंगों भ्रमर, मेंढक,

मेघ, वन आदि में संपूर्ण संगीत का आयोजन परिलक्षित होता है –

षट्पादतन्त्रीमधुराभिधानं
प्लवंगमोदीरितकण्ठतालम्।
आविष्कृतं मेघमृदङ्गनादैर्वनेषु
संगीतमिव प्रवृत्तम् ।।

(रामा. 4.28.15) रामायण की उत्पत्ति भी तो संगीत (छन्दोमयी वाणी) से हुई है –

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।

(रामा.1.2.15)

व्याध द्वारा मारे गये क्रौञ्च पक्षी के वियोगजन्य क्रौञ्ची के मर्मांतक विलाप से शोकसन्तप्त ऋषि वाल्मीकि के करुण रस प्लावित अन्तःकरण में परिस्फुरित संगीतात्मक छन्दोमयी वाणी ने मानो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अचम्भित कर एक दिव्य प्रकाश दिया हो। परिणामस्वरूप सहसा आविर्भूत विधाता ने वाल्मीकि से कहा – 'ऋषे! आद्यः कविरसि ।

आम्नायनादन्यत्र नूतनच्छन्दसामवतारः इति।

(उ.रा.च. 2य अंक)।

संगीत के महत्त्व की पराकाष्ठा का परिचय हमें गीता माहात्म्य से भी प्राप्त होती है–

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः ।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता ।।

(म.भा.भी.प.गी.मा. 3.1)

श्रीमद्भागवत् महापुराण के विभिन्न प्रसङ्गों में संगीत की महत्ता के अनेक प्रमाण उपलब्ध होते हैं। जैसे मुरलीधर लीलामय भगवान् श्रीकृष्ण का सुमधुर वंशीवादन पूर्वक सोलह सहस्र गोपिकाओं के साथ रासलीला की संरचना कर उन्हें मन्त्रमुग्ध किया जाना तथा कालीय दमन प्रसंग में सहस्र फणों से युक्त भयङ्कर विषधर नागराज के मस्तक पर संगीतमय नृत्य से उसे वशीभूत किया जाना आदि वर्णनीय वस्तु संगीत के औदात्त्य को प्रकट करते हैं।

वाणीवरदपुत्र महाकवि कालिदास तो जैविक सत्ता के लिए संगीत की अनिवार्यता पर बल देते हुये दिखाई पड़ते हैं। इस हेतु उन्होंने प्रकृति का अप्रतिम मानवीकरण भी किया है –

स किचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः
कूजद्भिरापादितवंशकृत्यम् ।
शुश्राव कुंजेषु यशः
स्वमुच्चैरुद्गीयमानं वनदेवताभिः ।।

(रघु. 2.12)

प्रस्तुत पद्य में गोसेवा में संलग्न सम्राट दिलीप के श्रम लाघव निमित्त प्रकृति स्वयं संगीत की संरचना कर उनकी सेवा में संलग्न दिखाई पड़ती है। संगीत की उपादेयता से सम्बन्धित मेघदूत का निम्नांकित पद्य भी महत्त्वपूर्ण है–

कुर्वन् सन्ध्याबलिपटहतां
शूलिनः श्लाघनीया
मामन्द्राणां फलमविकलं
लप्स्यसे गर्जितानाम् ।। (पू.मे. 37)

प्रस्तुत पद्य में कवि ने संगीत को महाकालेश्वर की सायंकालीन पूजाविधि का एक अभिन्न एवं अत्यावश्यक अङ्ग के रूप में उपस्थापित किया है।

पुराणों व संस्कृत साहित्य की अन्य विधाओं में बहु चर्चित देवर्षि नारद की संगीतमय दैनिक दिनचर्या तो जैविक सत्ता की उपादेयता का सुदृढ परिचायक है। इस सन्दर्भ में महाकवि माघ विरचित निम्नाङ्कित पद्य समुचित उद्धरण है –

रणद्भिराघट्टनया नभस्वतः
पृथग्विभिन्नश्रुतिमण्डलैः स्वरैः।
स्फुटीभवद्ग्रामविशेषमूर्च्छना
मवेक्षमाणं महतीं मुहुर्मुहुः।।

(शिशु.म.का. 1.10)

इसके अतिरिक्त संगीत की सम्मोहन शक्ति से पशु,पक्षी, सरीसृप आदि के भी सम्मोहित होने के दृष्टान्त हमें संस्कृत काव्य–नाटकादि में प्राप्त होते हैं। संगीत में ऐसी अलौकिक शक्ति है कि जिसके प्रयोग से आधि(मानसिक रोग) व व्याधियों (शारीरिक पीड़ा) के उपशम के साथ एकाग्रता साधने में भी सफलता प्राप्त होती है।

उपर्युक्त विवेचन से निष्कर्ष के रूप में हम यह व्यक्त कर सकते हैं कि संगीत एक ऐसी सम्मोहन शक्ति है, जो 'एक अनार सौ बीमार' इस कहावत की अन्वर्थता में अनेक समस्याओं का समाधान सूत्र बनाते हुये जीवन की विषम परिस्थितियों में भी एक सकारात्मक एवं संवेदनात्मक तथा सावचेतनात्मक संजीवनी बूटी के रूप में सक्रिय भूमिका निभाने में समर्थ है।❑

शिक्षण और संगीत

श्रीमती राजेश्वरी हरकावत
सेवानिवृत्त सह-आचार्य (संगीत)
राजकीय मीरा कन्या
महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)

संगीत कला भारतीय जीवन एवं संस्कृति में पाई जाने वाली कला विधाओं में महत्त्वपूर्ण विधा है। इस विधा में गायन, वादन एवं नृत्य तीनों अपनी-अपनी विशिष्टता लिये हुए हैं। गायन अथवा वादन से संगीतकार जो भाव प्रस्तुत करना चाहता है, उसके अनुरूप स्वरों का उपयोग करके अपने भाव मुखरित करता है, इसी प्रकार नृत्य में कलाकार अपने भाव प्रदर्शित करने के लिए हाव-भाव एवं आंगिक क्रिया का सहारा लेता है।

सभी कलाओं में प्रशिक्षण एवं विधिवत् शिक्षा का महत्त्व है परन्तु संगीत में इसका अत्यधिक महत्त्व है। संगीत शिक्षण को अध्ययन की दृष्टि से दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

1. **घराना अथवा गुरु-मुखी शिक्षा** - घराना एक विशिष्ट गायन शैली, वादन शैली और नृत्य शैली का सूचक है। यह शैली या रीति जिस कलाकार के द्वारा प्रवर्तित होती है, वही उनके संस्थापक माने जाते हैं और उन्हीं के नाम से अथवा निवास स्थान से घराने का नामकरण होता है। घराने परम्परा संगीत के प्रतिनिधि एवं प्रतीक है। परम्परागत संगीत की शिक्षा और उसकी उत्तम व्याख्या इन्हीं घरानों के माध्यम से हुई है। उत्तर में जिसे घराना कहते हैं, दक्षिण में वही सम्प्रदाय कहलाता है। प्रत्येक घराने की शिक्षण पद्धति का अपना तरीका है। गुरु अपनी साधना से अर्जित समस्त ज्ञान और कला-सौन्दर्य के सूक्ष्म प्रयोगों को अपने शिष्यों में बहुत ही खूबी से अवतरित कर सका इसलिए घरानेदार शिक्षा ने शिष्य में सांगीतिक परम्परा को सुरक्षित रखा एवं विकसित किया। संगीतकारों में शिक्षक और कलाकार का सुन्दर संगम होने से योग्य शिष्य अपने गुरु की सृजन प्रक्रिया से जुड़ा रहता है। गुरु इसके योगदान से परम्परा और निरन्तरता को अपना लक्ष्य बना सके। सामान्य को विशिष्ट कैसे बनाया जाय, इसी क्रम में घराने के प्रवर्तकों ने शिक्षण के तरीके निकाले, जो व्यक्तित्व में निहित स्वार्थपरक प्रवृत्तियों को सकारात्मक ढंग से नियंत्रित व नियमित करके समस्त द्वन्द्वों से शिष्य को ऊपर उठाकर, उसके कला गुणों को उन्नत कर सके।

अभ्यास व गुरु परम्परा से प्राप्त शिक्षा, स्वर के सूक्ष्म रूप, राग चलन, भाव व संगीत प्रदर्शन के क्रम में संगीत के परमाणु, मानवीय दुर्बलताओं को नियंत्रित कर उसकी सात्विक वृत्तियों को प्रशस्त कर, उसमें प्रसन्नता, सहृदयता और सद्भावना का संचार करते हैं, जो भारतीय शास्त्रीय संगीत के जीवन का चरम लक्ष्य है। घराने के विकास में राजाश्रय की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। संगीतज्ञों को प्रशंसा, यश, कीर्ति के साथ आर्थिक सम्बल भी मिला, परन्तु हमेशा यह स्थिति रही, ऐसा नहीं है। शिक्षण की इस परम्परा में कई कारणों से, स्थिति अनुकूल नहीं रही और इसमें दोष और कमियाँ धीरे-धीरे बढ़ती गई। आर्थिक सुरक्षा के अभाव में घरानों के शिष्य परम्परा के विकास में अवरोध आने लगे और संगीत को हेय दृष्टि से देखा जाने लगा।

2. संस्थागत शिक्षण - समाज में संगीत की प्रतिष्ठा और सम्मान को पुनः स्थापित करने हेतु संस्थागत शिक्षा ने संगीत जगत में प्रवेश किया। संगीत को पुनः समाज में सम्मान मिले और संगीत कला खोयी हुई प्रतिष्ठा प्राप्त कर सके इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु संगीत उद्धारक और युग प्रवर्तक के रूप में पं. विष्णु नारायण भातखण्डे और पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ने संस्थागत शिक्षा को एक सशक्त साधन मानकर उसके स्वरूप, शिक्षण विधि आदि पर विचार किया। संगीत के प्रचार प्रसार हेतु दोनों ने अपने अपने ढंग से स्वर लिपि का निर्माण किया जिसके द्वारा बंदिशों को सुरक्षित रख सके। दोनों युग निर्माताओं ने गुरुकुल शिक्षा की सारी खूबियों को समयानुसार आवश्यकताओं को जोड़कर संगीत शिक्षण को समन्वित रूप से स्थापित किया। संगीत महाविद्यालयों को स्थापित कर उसे संगीत देने व लेने का केन्द्र बनाया। गुरु शिष्य परम्परा की खूबियों को संस्थागत शिक्षा से जोड़ा गया, फलस्वरूप संस्थागत शिक्षण के प्रति विश्वास बढ़ता गया परन्तु बिना किसी योजनाबद्ध कार्यक्रम के स्कूल, महाविद्यालय और विश्व विद्यालय में संगीत ने एक विषय के रूप में प्रवेश पा लिया। फलस्वरूप शिक्षक के लिए संगीत विषय अर्थ प्राप्ति का एक मात्र साधन बना और शिष्यों के लिए केवल मात्र डिग्री प्राप्त करने के लिए एक साधन बना। पिछले कुछ वर्षों में बहुत बड़ी संख्या में विद्यार्थियों में संगीत विषय शिक्षा के समग्र विकास का विषय नहीं बना। आज बच्चों के लिये प्रारम्भिक वर्षों में संगीत शिक्षा के महत्त्व को समझना बहुत जरूरी है तथा साथ ही कला प्रशिक्षण के दौरान घरानेदार शिक्षा और वर्तमान शिक्षा प्रणाली दोनों के गुण सम्मिलित करने की परम आवश्यकता है। ❑

Natyashastra is the first work on music that clearly classifies music. It divides music into octaves and twenty-two keys. Then comes 'Dathilan' another landmark in music theories that speaks of twenty-two shrutis per octave. This classification assumes that only these twenty-two shrutis can be articulated by human vocal chord system. In the ninth century AD, Matanga wrote 'Brihaddesi', which defines Raga.

Bharat and Music

Dr. TS Girishkumar
Member, ICPR

We often think, feel and speak that in Bharat, everything can be found as presented between two points, that is, everything begins from or with the Vedas and everything is directed towards the end desideratum as Moksha. Consider these as two inescapable points. To speak about music is also not different; the very roots of Bharatiya music belong to the Vedas, particularly, the Sama Veda. It is understood that when Vedic mantras were systematised with ragas and music, it became Sama Veda.

Some history

Music is sound, sound of varying origins. When we speak of sound, the fundamental sound is "Omkara". Some scientists claim that the sound of the sum resembles Omkara, and NASA scems to support this. Thus, the sound itself is traced to the origin of universe. For the Hindu, the first ever sound is "Nada Brahma", where Brahma, rather the ultimate reality Bahman, is understood to be sound, the Omkara. The purest and unstruck sound.

Another philosophical implication of Nada Brahma is more to the point. Hindu Dharma speaks about multiple ways to attain Moksha, which is to be understood as multiple techniques towards transcendence in the strict sense of the term. When we speak about religions, we find that religions 'prescribe' just one method or way to attain what is akin to Moksha in their respective faith systems,

strictly prescribed with many dos and don'ts. In the Vedic Dharma, this is not the case, there are many methods or ways towards transcendence, given through experiments done by acharyas. One can choose and pick what befits one, and more than that, should one be competent, one can even create yet another one for himself as well as for others who might find that befitting.

To speak of some instances, Bhakti is the most simple and common one. Karma could be another, so shall Yoga be. Jnana is reportedly the finest, and for the chosen few. Dance or Nritya is a performing art through which one may find Moksha, through right attitude. Music is yet another one, that elevates one to Moksha. Here, on a higher plane, Music becomes the ultimate reality itself; hence Nada Brahma.

Bharat and Music

Obviously, music is rooted in the Vedas. The earliest available ragas originate from the Sama Veda. Subsequently, in the later Vedic times, music gets the name 'Sama gana' or Sama Sangita. Technically, Sama gana is reciting the Vedic Suktas through musical notations, which is a way different from what is understood to be contemporary music or singing: nonetheless, this is how music began in Bharat, and began in Bharat also should imply began in the world itself.

From here, music developed into multiple patterns and forms. 'Jatigan' is music developed subsequently where the epics got sung. 'Prabandhsangit' is a development in between second and seventh century AD, in the medium of Sanskrit language, which became very popular. When the same started using Hindi as medium, it became known as 'Dhruvapad' which is extended to even present day through developments of alterations.

Early references

The earliest reference to music is found in Panini, in 500 BC. Theories of music must also have been developing much earlier, but the first available reference to a music theory is seen in 400 BC, in the text of 'Rikpratisakhya'. When it comes to the fourth century AD, we have Bharata Muni and his 'Natyashastra' with several chapters on music.

Natyashastra is the first work on music that clearly classifies music. It divides music into octaves and twenty-two keys. Then comes 'Dathilan' another landmark in music theories that speaks of twenty-two shrutis per octave. This classification assumes that only these twenty-two shrutis can be articulated by human vocal chord system. In the ninth century AD, Matanga wrote 'Brihaddesi', which defines Raga. The eleventh century AD text written by Narada, the 'Sangita Makaranda', enumerates ninety-three Ragas and divides these ninety-three ragas into masculine and feminine as well.

On the basis of the texts available to us now, we can see that such enormous amount of studies and researches are done in ancient Bharat and the ancient ones made such tremendous innovations to their developed knowledge system. What is striking in all these is the amazing ability of ancient people of Bharat to connect and interlink

all areas and branches of knowledge found to make it a complete and coherent whole, truly in the line of the epistemology of co-existence. Indeed, these things are based on the available texts as on today, and we have no real ideas of what must have been lost and destroyed during invasions and destructions.

Influences from without

During the medieval times, the Muslim invasions and influences made differences to Bharatiya music. There were Muslim influence through devastations and destructions not only to Bharatiya architectural structures, bur also to performing arts in their earnest efforts to Islamise everything. This need not be explained at all; just see how they have renamed our ancient places as well as buildings.

Under this Muslim influence, music in Bharat branched into two, the archetype Karnatic and Hindustani. This Hindu Muslim divide of music happened around the fourteenth century AD. The Muslims wanted to substitute Persian language with Sanskrit, though they had no real connection to Iran or the Shia sect of Islam. They wanted Persian because Persian was the only language available to them that had considerable literature and status. When Hindus learned Sanskrit, Muslims learned Persian to juxtapose, and interestingly this made the disguise of Jamaluddin Afghani as a Sunni easier, whereas he was from Tehran and a Shia.

By the fifteenth century AD, the Muslim influence in Bharatiya music developed further. The original Dhruvapad in Sanskrit got transformed into the Dhrupad form of singing. Khayal developed two centuries later, in the eighteenth century. Predominantly, these Hindustani branches of music laid stress on the musical structure, following a principle of harmony over melody. Hindustani music adopted a scale of ShuddhaSwaraSaptika or octave of natural notes. The influence of Muslim rule through Persian background becomes very clear here.

Music is sound, sound of varying origins. When we peak of sound, the fundamental sound is "Omkara". Some scientists claim that the sound of the sun resembles Omkara, and NASA scems to support this. Thus, the sound itself is traced to the origin of universe. For the Hindu, the first ever sound is "Nada Brahma", where Brahma, rather the ultimate reality Bahman, is understood to be sound, the Omkara. The purest and unstruck sound.

The Karnatic branch of Bharatiya music could escape such Muslim influence due to geographical factors, as it developed in the south of Bharat. Karnatic music remained original to the Vedic Sanskriti, remaining in the traditional octave. Sahitya is more important to Karnatic music, and most of the Kirtanas are compositions towards one or the other Hindu deity. Intense devotion is ominously present in Karnatic pattern of singing, and they were mostly performed in temple premises. As a matter of fact, most performing arts of Bharat are traditionally performed in the temples. Their patronage also came both from the temples and Rajas.

There is always a combination of music and dance as one performance subject in both Hindustani and Karnatic. Bharata Muni himself had combined music and dance together through his Natyashastra and we find this tenet continuing. Both Hindustani and Karnatic developed further by bringing most of the aboriginal and indigenous music into the classical fold through assimilations, which is a normal process in Bharatiya knowledge tradition. The acharyas knew to give the due respect to all areas of whatever is positive.

We know that Bharat has the most numbers of classical dances in the world, though all classical dances of Bharat are based on just one text, the Natyashastra. Similarly, Bharat also has two branches of classical music, which again, is of the Vedic origin. They both, when carried out authentically enables what is ultimately desired, Moksha. Precisely, at this point, music becomes Nada Brahma at once. ❑

Healing with Music : The Indian and Western Traditions

Dr. Bandana Chakrabarty
Formar Joint Director,
Higher Edu. Deptt.,
Govt. of Raj., Jaipur

What is music ? There are hun dreds of definitions about what music is and what music does but I go with Henry Longfellow who believes, "Music is the universal language of mankind." Music is a form of art that is easily accessible and has an instant effect on one's mind. It is believed that this universe came into being because of 'heavenly harmony.' In a poem titled 'A Song for St' Cecilia's Day' the English poet, Dryden wrote:

From harmony,
from Heav'nly harmony
This universal frame began

Every element of this universe has its origin in a sound vibration and hence it is no surprise that music can control nature, blossoms, trees, animals and even the human mind. Music, whether it is the Indian Classical System or the Western Classical System has seven notes or swaras. In the Indian System these seven swaras are Sa, Re, Ga, Ma, Pa, Dha and Ni whereas in the Western system the notes are Do, Re, Mi, Fa, So, La, and Ti. It is believed that music cleanses the person from within and makes him a noble soul. Plato, the ancient Greek thinker, believed, "Rhythm and harmony find their way into the inward places of the soul." In an article titled 'Healing with Music' Gudipoodi Srihari writes of the positive effects of a lullaby which puts a child to sleep. He says, "Music appreciation begins right from the womb with the foetus listening to the mother's heartbeats.

Ancient Greeks, Arabs and Indians had knowledge of the healing properties of music. Philosophers like Plato and Confucius emphasized on the need for musical training for statesmen. William Shakespeare, the renowned poet and dramatist, wrote:

The man that hath no
music in himself
Nor is moved with
concord of sweet sounds
Is fit for treasons,
stratagems and spoils
Let no such man be trusted.

It is not that philosophers and writers have spoken about the efficacy of music. Music has been said to have been practised from Biblical times. Aristotle considered music as a force that cleansed emotions. The father of modern medicine, Hippocrates, played music to treat his mental patients. It is also believed that Arab hospitals in the thirteenth century had music rooms attached. Even soldiers undergoing mental trauma in battlefields were treated to music to alleviate their pain. Music has been scientifically proven to have a powerful effect on the body as well as the brain.

Healing with Music: The Indian Tradition

These days music therapy is a burgeoning field. Indian music therapy is an integration of ancient healing practices and musical tradition combined with changes derived by current clinical practices. In India, Gandharva Tattva which dates back to the 4th century BC, is a treatise on the science of music. Raga Chikitsa, an ancient text,

discusses the therapeutic role of musical melodies. During olden times, a classical musician of the sixteenth century, Swami Haridas, used music for treating illnesses. Sangita Sudha, a seventeenth century text, written by Nayaka king, Raghunatha Nayak and his minister, Govinda Dikshitar gives an account of the effects of music on emotions.

In India Nada Yoga and Raga Chikitsa form the backbone of the ancient system of music therapy. Nada Yoga rests on the premise that the entire cosmos and all that exists in the cosmos, including human beings, consists of sound vibrations called nada. Nada Yoga's use of sound variations and resonances are used to pursue palliative effects on different problematic psychological, spiritual conditions. It is also related to the practice of Mantra chanting to achieve peace of mind, awareness and enlightenment as Nada can be termed as primal sound of the creation or the vibrations that are found in all of us.

The repetition of a mantra allows one's mind to project an aspect of itself, attract different things to one's life and to maintain a healthier state of mind and therefore it is used as a palliative resource not to cure illnesses and emotional crisis but to improve one's mind's performance and gain higher levels of consciousness. Spiritual guru, Ganpathi Satchidananda of Mysore is an able practitioner of this kind of music therapy along with some reputed musicians of the south. It is believed that if mantras are chanted with perfect stress on each syllable, it releases the power of the mantras. Srihari writes that experiments with sound and its effects proved that the Omkar Nadam in a particular frequency sounds as though lifting the mortal soul to celestial heights.

Raga Chikitsa

Samaveda is the treatise related to music. Raga Chikitsa encompasses curative ragas with mood-enhancing features in clinical application. A raga is a unique sequence of selected notes or swaras that lend appropriate 'mood' or 'emotion' or (bhava) in a selective combination. Depending on its nature a raga could induce or accelerate joy or sorrow, violence or peace etc. Rasanubhava, an experience through music, has a psychological basis.

The combination and progression of specific notes in a raga leads to evoke a specific mood or 'rasa.' These rasas produce specific effects on the physical body and reduce deep emotional problems. The ancient Sanskrit text known as Natyashastra discusses several rasas like humour, love and eroticism, anger, disgust, heroism, sadness etc.

Just as we have seven notes in music our physical body has seven glands and seven chakras. Due to this each one of the notes of the scale are commonly associated with each one of the chakras. Not only in mitigating diseases but listening to the right kind of music brings out the best in a normal human being helping him attain his fullest potential. Playing, performing and even listening to appropriate ragas can work as medicine. Raga Chikitsa or therapy works in conjunction with a music therapist. The music therapist assesses the emotional and physical health of the patient and then designs music sessions according to the patient's needs.

Empirical studies have calculated the effectiveness of raga therapy in surgery, heart diseases, paediatric oncology and care of the elders. Many patients who have suffered brain injuries have difficulty in their movement and language abilities. Such patients respond

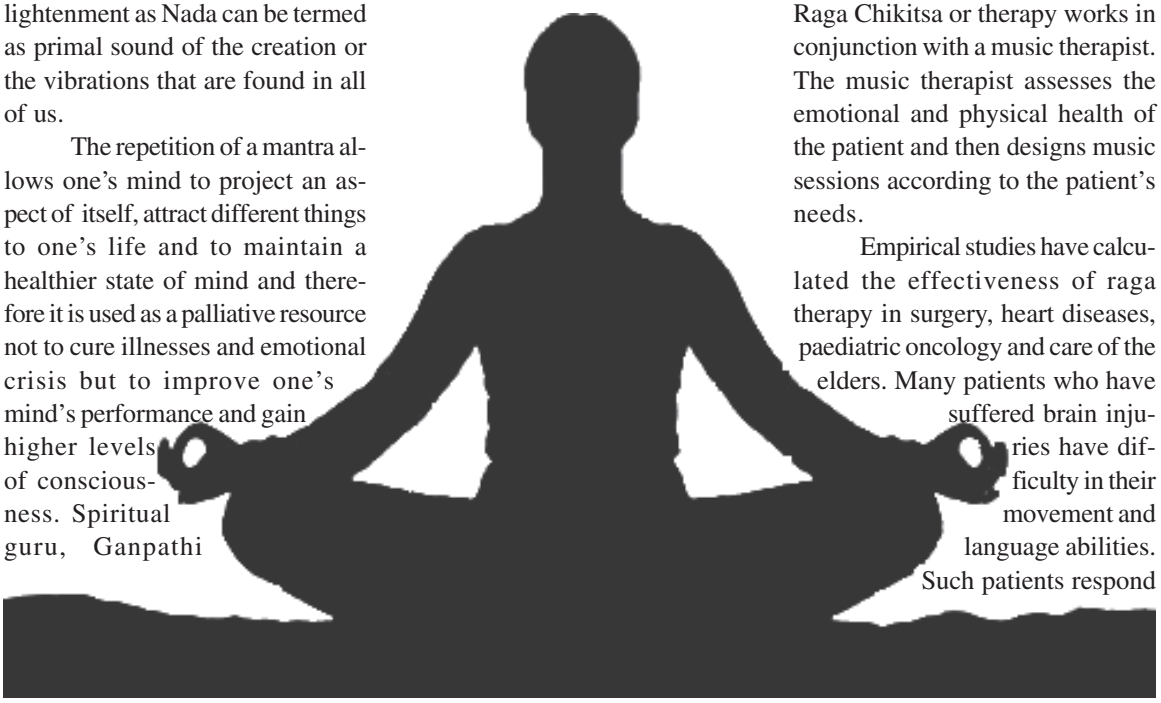

to music with movement, however small, and become emotionally better disposed. Dr. Bhaskar Khandekar from Jabalpur is the first modern music therapist in India who started his practice in 1993. He uses selective music for selective diseases and helps them improve their motor skills, cognitive functioning, social and behavioural skills.

Roop Verma, a professional sitarist from North India, uses the restorative power of music to maintain and improve emotional, physiological and psychological well-being of the patients. Singing is a unique exercise wherein concentration, meditation and breathing exercises take place unknowingly and simultaneously. While Nilambari raga induces sleep, ragas like Bhupala and Malayamarutam, if played before dawn serve as a pleasing catalyst for people to wake up from their sleep. Music can provide solace, reduce anxiety and depression and improve tolerance to pain. Raga Madyamvati can create calmness in the listener's mind.

Dr. Balaji Tambe, through his research, has proved that Raga Bhupali and Raga Todi provide tremendous relief to patients of high blood pressure. Clinical music therapy began in 2005 at the Centre of Excellence in Delhi and seven such centres in and around Delhi treat people with the help of music therapy. Ragas like Darbari Kanhada, Khamaj and Pooriya are found to alleviate mental tension. Listening to music daily in the first month after stroke leads to structural changes in the frontolimbo region. It is also effective in alleviating chronic pain.

The combination and progression of specific notes in a raga leads to evoke a specific mood or 'rasa.' These rasas produce specific effects on the physical body and reduce deep emotional problems. The ancient Sanskrit text known as Natyashastra discusses several rasas like humour, love and eroticism, anger, disgust, heroism, sadness etc.

Ayurveda and Raga

Ayurveda is the name of traditional Indian medicine, the ancient science of Vedic healing which classifies inner energy in three main types of Doshas, that is Vata, Pitta and Kapha. It is believed that every human being has a dominant dosha which influences his health and personality. Ayurveda treatment basically improves health through changes in the nourishment and lifestyle of the patients but when it gets combined with Indian music, it is more effective for healing people. When vata, pitta and kapha are in balance, they produce vigour (ojas), radiance (tejas) and essence (prana) respectively.

Early morning is the kapha time hence a kapha type person should listen to an early morning raga like Bhairav to cure him of physical imbalances. Raga Bilawal can be played or sung during the later part of morning or the afternoon for the pitta type person. Late afternoon or evening is vata time when Raga Pooriyadhanashri can be used as a cure. Thus the doshas can be aggravated or balanced by varying melodies and rhythms. It is said that if Raga Gurjari Todi is played between seven and ten in the morning it can change the pulse rate, blood circulation, blood pressure, metabolism and respiration.

Thus ragas not only influence human beings but also plants. In the early 1950s an Indian botanist, Dr. T. C. N. Singh proved the effects of sounds on the metabolism of plant cells. He proved that music affects the growth, flowering, fruiting and seed yields of plants. The playing of Raga Charukesi increased the crop yield from twenty five per cent to sixty per cent and increased the chromosome count of certain species of water-plants.

Healing with Music : The Western Tradition

Music therapy is an established health profession in which music is used within a therapeutic relationship to address physical, emotional, cognitive and social needs of individuals. In an article, 'Health Benefits of Music Therapy' Dr. Mary Williams is of the view, "Music therapy is a form of healing that uses music to provide care to patients. While this is different from routine physical therapy or prescribing medicine, it is not a form

Though music has always been recognized to 'soothe a savage breast,' the notion of song, sound frequency and rhythm to treat physical ailments is no longer a new domain. Music therapy is a fascinating field which has a way of enhancing quality of life and can also promote recovery. If we wish to live a healthy life let us make music an integral part of our lives.

of alternative medicine." In other words, music therapy helps people to recover physically, mentally, emotionally and socially. The past few years have seen music therapy play an increasing role in all types of healing.

The practice of music therapy is prospering in western countries like the UK and in the USA music therapists operate under the umbrella of an organization called American Music Therapy Association (AMTA). The mission of AMTA is to enable public awareness about the benefits of music therapy. Thus music therapy can be defined as "the clinical and evidence-based use of music interventions to accomplish individualized goals within a therapeutic relationship by a credentialised professional who has completed an approved music therapy programme."

Music therapy can improve everything from a patient's speech to their memory and physical balance. Whether it is the Indian or Western music traditions both believe that at its core music is sound and sound is rooted in vibration. In this context Lee Barlet, a music professor at the University of Toronto and several researchers are experimenting whether sound vibrations absorbed through the body can alleviate the symptoms of Parkinson's disease, fibromyalgia and depression. This therapy is known as vibroacoustic therapy which involves using low frequency sound to produce vibrations that are applied directly to the body. It has been proved that short term vibroacoustic therapy with Parkinsons patients led to improvements in their symptoms, involving better walking speed, bigger steps and reduced tremors.

Several benefits of music therapy includes easing anxiety and discomfort of people suffering from colonoscopy, cardiac angiography or knee surgery. Listening to music before their procedure made the patients less anxious and there was lesser need of sedatives. It can also help people who have lost their speech after a stroke or a traumatic brain injury. Former US Representative, Gabby Gifford used this technique to enable her to testify before a Congressional Committee two years later after a gunshot wound to her brain had destroyed her ability to speak. In such cases Melodic Intonation Therapy corrects speech disorders.

This therapy reduces the effects of cancer therapy like nausea and vomiting. It can also help in rehabilitation and improve the quality of life of patients suffering from dementia. The University of Alberta researchers found that children in the age group of three to eleven who listened to music while getting an IV inserted experienced less pain.

Though music has always been recognized to 'soothe a savage breast,' the notion of song, sound frequency and rhythm to treat physical ailments is no longer a new domain. Music therapy is a fascinating field which has a way of enhancing quality of life and can also promote recovery. If we wish to live a healthy life let us make music an integral part of our lives.❑

हिंदी पर अंग्रेजी का औपनिवेशिक आक्रमण

डॉ.ओम प्रभात अग्रवाल
पूर्व अध्यक्ष- रसायन विभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

कुछ समय पूर्व श्री अमित शाह ने राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी को प्रतिष्ठापित करने संबंधी मात्र एक वक्तव्य क्या दिया, देश में तूफान आ गया। भाषा की आग पर राजनैतिक रोटियां सेकने वाले कतिपय नेता एवं अंग्रेजीदां बुद्धिजीवियों के कान खड़े हो गये। उन्हें एक बार फिर अपना वर्चस्व खतरे में पड़ता दिखने लगा और वे उठ खड़े हुए अपने पुराने और भोथरे हो चुके हथियारों को चमका कर हिंदी से युद्ध करने। उनके अंतर्मन का भय इतना गहन है कि अब तक यह आक्रमण रुका नहीं है। यह भी सत्य है कि भारत की भाषाई विविधता की रक्षा के नाम पर उनके सभी प्रयत्न वस्तुत: देश में अनंत काल तक अंग्रेजी को बनाये रखने के लिये हैं।

इन आक्रमणकारियों के तर्क वही पुराने घिसे पिटे हैं जैसे कि देश के विभिन्न भागों के बीच में संवाद बनाये रखने में केवल मात्र अंग्रेजी ही सक्षम है। दूरदर्शन पर एक बहस में भाग लेते हुए श्रीमती किरण बेदी ने जोर शोर से इस तर्क को महारथी बना कर हिंदी के सामने खड़ा किया। इस संबंध में लेखक अनेक ऐसी घटनाओं का विवरण प्रस्तुत कर सकता है जो उनके तर्क पर कुठाराघात कर सकते हैं, परंतु लेख के अधिक लंबा हो जाने का भय उसे ऐसा करने से रोक रहा है। श्रीमती बेदी भूल गई कि उनका यह तर्क बमुश्किल 15 प्रतिशत भारतीयों पर लागू होता है। ऐसी दशा में शेष 85 प्रतिशत भारतीय किस प्रकार संवाद करेंगे? अंग्रेजी को भारत में संवाद की सामान्य भाषा बताने वालों को संभवत: ज्ञान नहीं है कि सैकड़ों वर्षों से हिंदू तीर्थयात्री इसी बेचारी हिंदी के माध्यम से संवाद करते रहे हैं और उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ। तर्क देने वालों को टाइम्स ऑफ इंडिया के 1 अक्टूबर, 2018 की वह रपट भी पढ़नी चाहिए कि आज भी व्यापारिक कारणों से बढ़ते देशांतरण (प्रवास) के चलते दक्षिण भारत में हिंदी में संवाद कर सकने वालों की संख्या निरंतर वृद्धि की ओर है; वर्ष 2001-2011 की अवधि में तमिलनाडु में ऐसे स्थानीय नागरिकों की संख्या में 50 प्रतिशत की वृद्धि हुई तथा समस्त दक्षिण भारत में भी कुल वृद्धि 13 प्रतिशत से ऊपर रही। उसी समाचारपत्र की 09.06.2019 की रपट के अनुसार अभिभावक अब यह महसूस करने लगे हैं कि केवल तमिल और अंग्रेजी से काम चलने वाला नहीं है और इसीलिए वे अपने बच्चों को अधिक से अधिक संख्या में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की परीक्षाओं में बैठने को प्रेरित कर रहे हैं। वर्ष 2009 से 2017 की अवधि में सभा के परीक्षार्थियों की संख्या 211805 से बढ़कर 774192 हो चुकी थी।

केवल दक्षिण ही नहीं, पूर्वोत्तर भारत में भी हिंदी का प्रसार आश्चर्यजनक रूप से हो रहा है। अरुणाचल प्रदेश में तो जहाँ 26 स्थानीय भाषायें हैं, हिंदी तीव्रता से बोलचाल की सामान्य भाषा बनती जा रही है। अरुणाचल ही क्यों, नागालैंड तक में जहाँ की सरकारी भाषा अंग्रेजी है, हिंदी अब स्पष्ट रूप से पैर पसारती दिख रही है।

हिंदी के विरुद्ध दूसरा तर्क यह है कि यह बहुत कठिन है। सुनकर आश्चर्य होता है। संभवत: हमारे मित्र चाहते हैं कि हिन्दी का स्वरूप वही बना रहे जो पचास वर्ष पूर्व था। परन्तु इस अवधि में तो हिन्दी का दायरा बढ़ा है, भले ही वह राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा का स्थान पूरी तरह न ले सकी हो। छुटपुट ही सही, परन्तु अब हिन्दी न्यायलयों की भाषा है, विज्ञान और तकनीक की भाषा है और प्रशासन की भी। नये उत्तरदायित्व, स्वाभाविक है कि उसे तनिक दुर्बोध बनाते हैं। सोचने की बात तो यह है कि क्या इन दायित्वों का निर्वाह करने वाली अंग्रेजी वही होती है जो बोलचाल की?

इसीलिए, बढ़े दायरे वाली हिन्दी का स्वरूप भी तनिक अनजान होने के कारण किंचित क्लिष्ट तो लगेगा ही। हम क्यों भूलते हैं कि इन्हीं दायित्वों के लिये हिन्दी को सक्षम बनाने हेतु ही अब तक कई लाख नये शब्द उसके कोश में जोड़े जा चुके हैं। जो कुछ अंग्रेजी में धीरे-धीरे स्वाभाविक चाल से हुआ, वही हिन्दी में त्वरित गति से अत्यंत अल्प समय में हुआ। इसीलिए ऐसा लग सकता है कि वह कठिन है, परन्तु उसे सहना तो पड़ेगा ही। समझना होगा कि यह निर्विवाद है कि कोई भी विदेशी भाषा सदैव के लिये भारत के सर पर थोपी नहीं जा सकती।

एक और विचित्र तर्क दिया गया है कि हिन्दी में तो बोलियों की भरमार है और ऐसी दशा में मानक हिन्दी किस प्रकार इन बोलियों के क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व कर पायेगी? परन्तु मित्रों भाषायें तो सदैव ही बोलियों से बनती हैं और उन्हीं में से सामान्य काम काज के लिये एक मानक भाषा का रूप ले लेती है, जैसे कि हिन्दी में खड़ी बोली। अंग्रेजी में भी ऐसा ही है। यदि विश्वास न हो तो देखें विकीपीडिया, अथवा एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका अथवा कैम्ब्रिज शब्दकोश। जैसाकि सभी भाषाओं की बोलियों में होता है, अंग्रेजी की बोलियों में भी शब्द, व्याकरण और उच्चारण आदि संबंधी पर्याप्त भिन्नतायें हैं। ऐसी दशा में बेचारी हिन्दी को उसकी अति सुंदर और साहित्यिक रूप से समृद्ध बोलियों के लिये कोसने से क्या लाभ?

कुछ मित्रों ने हिन्दी को इस सोच के कारण नकार दिया कि जीवनवृत्ति के अवसरों की भाषा तो अंग्रेजी है, हिन्दी नहीं। परन्तु यह तर्क भी अब केवल अंशत: सच है। अंग्रेजी अवश्य ही 'अवसरों' की भाषा है और वह भी क्योंकि हमने उसे ऐसा बना दिया है, परन्तु अब हिन्दी भी शीघ्रता से आगे बढ़ रही है।

भारतीयों की बढ़ती क्रय शक्ति और इंटरनेट मोह के कारण व्यापार में हिन्दी बड़े स्तर पर घुसपैठ कर रही है। 2 अप्रैल 2017 की 'द हिंदू' की रपट देखें जिसके अनुसार अंतरराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने उत्पादों से संबंधित बातें भारतीय उपभोक्ताओं तक पहुँचाने को लालायित हैं। पेंगुइन, हार्पर कॉलिन्स जैसे नामी विदेशी प्रकाशक तो अपने व्यापार को पंख देने के लिये सीधे ही हिन्दी में आ चुके हैं। स्पष्ट है कि ये सारी बातें हिन्दी के जानकारों को धनोपार्जन का नया अवसर प्रदान कर रही हैं।

मीडिया में हिन्दी छा चुकी है। रीडरशिप सर्वे 2017 के अनुसार पाठक संख्या की दृष्टि से पहले दो स्थानों पर हिन्दी समाचार पत्रों का कब्जा है। पाठकों की संख्या 18 करोड़ तक पहुंच चुकी है। डिजिटल माध्यम से भी हिन्दी समाचारपत्र पढ़ने वालों की संख्या आज लगभग 6 करोड़ है और वर्ष 2021 में 14.4 करोड़ अनुमानित है। यह स्थिति भी हिन्दी वालों के लिये अवसरों का एक नया द्वार खोलती है। वस्तुत: टाइम्स इंटरनेट के मुख्य सम्पादक श्री राजेश कालरा के अनुसार ऐसे लोगों की अत्यधिक कमी है जो अच्छी हिन्दी जानते हों और ''डिजिटल कंटेंट'' भी कुशलता से तैयार कर लेते हों। इस कमी को दूर करने के लिये ही बेनेट विश्वविद्यालय ने हिन्दी पत्रकारिता का एक विशेष पाठ्यक्रम प्रारंभ किया है। सरकारी कामकाज के लिये भी आज लगभग तीन करोड़ लोग हिन्दी का प्रयोग कर रहे हैं और वर्ष 2021 तक यह संख्या दस करोड़ तक पहुंच जाने का अनुमान है।

मध्यप्रदेश के अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय एवं राजीव गांधी तकनीकी विश्वविद्यालय में इंजीनियरी, चिकित्सा आदि की पढ़ाई की हिन्दी माध्यम से व्यवस्था हो चुकी है। भारतीय प्रशासनिक सेवा, रक्षा, मुंसिफी आदि की प्रतियोगी परीक्षाओं में हिन्दी का विकल्प है।

एक अन्य तर्क जो हिन्दी के विरुद्ध उछाला गया, वह था कि हिन्दी को राष्ट्रीय स्तर पर अपना लेने पर विज्ञान के क्षेत्र में भारत पिछड़ जायेगा क्योंकि विज्ञान की भाषा तो अंग्रेजी ही है। इस तर्क की असलियत सामने लाना आवश्यक है। दृष्टव्य है कि PISA (Programme for International Students Assessment) के अनुसार विज्ञान के क्षेत्र में विश्व में पहले दस देशों में चीन, जापान, कोरिया, जर्मनी, फ्रांस, इजरायल, रूस आदि हैं जो प्रारंभ से अंत तक केवल अपनी भाषा के माध्यम से विज्ञान की शिक्षा देते हैं। यही नहीं, कुछ समय पूर्व प्रकाशित क्यू.एस.वर्ल्ड युनिवर्सिटी रैंकिंग के अनुसार कतिपय अंग्रेजी से इतर माध्यमों वाले विश्वविद्यालयों के स्थान काफी आगे हैं, जैसे चीन के सात विश्वविद्यालय। दूसरी ओर, अंग्रेजी पर पूरी तरह निर्भर केवल तीन भारतीय विश्वविद्यालयों को ही स्थान मिल सका और वह भी काफी नीचे।

हिन्दी का अन्य भारतीय भाषाओं से विरोध भी नहीं है। अब अन्य भाषा-भाषियों को अपने अहं का परित्याग कर राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी को उसका अधिकार दे देना चाहिए। एक विदेशी भाषा के सहारे कामकाज चलाने की अपमानजनक स्थिति बहुत दिन तक बनाये नहीं रखी जा सकती। स्मरण रहे कि उपराष्ट्रपति श्री वेंकैया नायडू ने कहा है कि अंग्रेजी बहुसंख्य भारतीय बच्चों को हीन भावना का शिकार बना रही है। निश्चय ही यह एक स्वस्थ गणतंत्र के लिये अच्छा संकेत नहीं है।

सच तो यह है कि हिन्दी में अनेक विज्ञान शोध जर्नल, यथा- अनुसंधान, भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका, विज्ञान परिषद अनुसंधान पत्रिका, अंवीक्षिकी, कृषि चयनिका आदि तक निकल रहे हैं। इनके अतिरिक्त अनेक लोकरुचि विज्ञान पत्रिकाएँ भी प्रकाशित हो रही हैं, यथा-विज्ञान, आविष्कार, विज्ञान गरिमा सिंधु विज्ञान प्रसार, विज्ञान प्रगति, साइंस इंडिया आदि। हिन्दी माध्यम से विज्ञान में शोध सेमिनार भी आयोजित हो चुके हैं/हो रहे हैं। वर्ष 1980 के दशक में ही ऐसा पहला अत्यंत सफल सेमिनार, ''संकुल रसायन-विभिन्न आयाम'' स्वयं लेखक ने आयोजित किया था और फिर दो अन्य के आयोजन में सहयोग किया था।

स्पष्ट है कि हिन्दी में उच्चतम स्तर तक के विज्ञान कार्य की यथेष्ट क्षमता है। जो कमियां हैं वे तभी पूरी हो सकती हैं जब बड़े स्तर पर कार्य प्रारंभ कर दिया जाय। दुर्भाग्य है कि यही संतोषजनक रूप से नहीं हो रहा है। स्मरणीय है कि भारत के महान वैज्ञानिक डॉ. सत्येन्द्र नाथ बोस, जिनके नाम पर ही परमाणु के एक मूलभूत कण का नाम 'बोसॉन' रख दिया गया है, ने कहा था कि उन्होंने भौतिकी के अपने छात्रों को सदैव केवल बंग्ला माध्यम से शिक्षा दी। तात्पर्य यह कि विज्ञान शिक्षण के लिये अंग्रेजी अनिवार्य नहीं है।

अंग्रेजी भारत को जोड़ती नहीं बांटती है, एक अंग्रेजीदां भारत और दूसरे अंग्रेजी न पढ़े लोगों के भारत में। यह निश्चय ही एक विस्फोटक स्थिति है। हिन्दी का अन्य भारतीय भाषाओं से विरोध भी नहीं है। अब अन्य भाषा-भाषियों को अपने अहं का परित्याग कर राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी को उसका अधिकार दे देना चाहिए। एक विदेशी भाषा के सहारे कामकाज चलाने की अपमानजनक स्थिति बहुत दिन तक बनाये नहीं रखी जा सकती। स्मरण रहे कि उपराष्ट्रपति श्री वेंकैया नायडू ने कहा है कि अंग्रेजी बहुसंख्य भारतीय बच्चों को हीन भावना का शिकार बना रही है। निश्चय ही यह एक स्वस्थ गणतंत्र के लिये अच्छा संकेत नहीं है। ❑

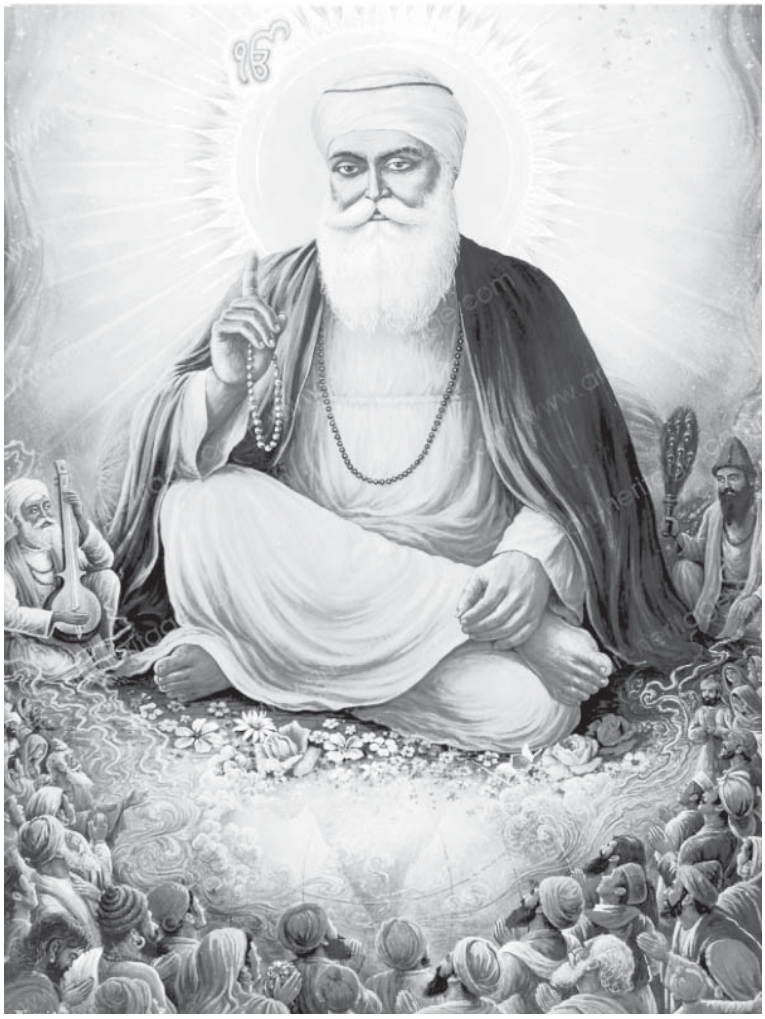

श्री गुरुनानक देव जी 550 वीं पावन शताब्दी पर्व

सरदार जसबीर सिंह
पूर्व अध्यक्ष
अल्पसंख्यक आयोग
राजस्थान सरकार, जयपुर

श्री गुरुनानक देव जी (1469-1539) मध्य युग के क्रान्तिकारी, समाज सुधारक, महान चिन्तक, युग निर्माता, संत कवि महान दार्शनिक एवं सिख धर्म के संस्थापक थे। उनके समकालीन अनेक संत एवं आध्यात्मिक गुरु हुए लेकिन गुरु नानक देव जी की परम्परा के अन्य संत कवियों का ध्यान देश की दुर्दशा तथा शासकों के अत्याचारों की तरफ नहीं गया। यह श्रेय केवल गुरु नानक देव जी को जाता है जिन्होंने न केवल देश की राजनीतिक दुर्दशा का चित्रण किया अपितु एक देशभक्त का कर्तव्य निभाया। समकालीन राजाओं को ललकारा, देश की दयनीय स्थिति का चित्रण कितने मार्मिक ढंग से किया -

राजे सीह मुकदम कुते।
जाई जगाइन्हि बैठे सुते।
चाकर नइदा पाइन्हे छाड़।
ख पितु कतिये चाटि जाहु।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना-1288)

अर्थात् बादशाह अत्याचारी है, उनके उत्तराधिकारी कुत्तों की तरह लोगों का खून-चूस रहे हैं। वे हठात जनता का सब कुछ हड़प जाते हैं। ऐसी शोचनीय अवस्था में अपना कर्तव्य पहचाना तथा एक क्रान्तिकारी की तरह उस दु:खद अवस्था का चित्रण अपनी वाणी में किया। उन्होंने बाबर को जाकर कहने में संकोच नहीं किया। बेशक इसके फलस्वरूप उन्हें जेल में डाल दिया गया। उन्होंने बाबर के जुल्मों से हुई भारत की दुर्दशा का चित्रण मात्र ही नहीं किया अपितु उस जबर और जुल्म का उपालंभ ईश्वर को देते हुए अपने राष्ट्र-प्रेम का परिचय भी दिया। इस सन्दर्भ में आपने शब्द उच्चारण किया -

खुरासान खसमाना कीआ
हिन्दुसतान उराइआ।
आपे दोसु न देई करता
जयु करि मुगलु चढाइआ।।
एती मार पई करलागे
तैं की दरदू न आइआ।।

(पन्ना-361)

गुरु नानक देव जी के समय भारत की एकता और अखण्डता पूरी तरह टूट चुकी थी। समाज में चारों ओर बहमों-भ्रमों, जाति-पाति, भेद-भाव का अंधकार फैला हुआ था। गुरु नानक देव जी ने अपने विवेक द्वारा इन बुराइयों को दूर करने का प्रयत्न किया। उन्होंने भूले-भटके लोगों को बहमों, भ्रमों एवं कर्मकाण्डों के मकड़जाल से निकालने हेतु चार महान यात्राएँ की जिन्हें चार उदासियों के नाम से भी जाना जाता है। उन्होंने सम्पूर्ण भारत ही नहीं अपितु विश्व भ्रमण किया और वहाँ जाकर लोगों को सच्ची उपासना करने का ढँग बताया। उन्होंने मानवता, शान्ति सद्भावना एवं मातृभावना का पाठ पढ़ाया।

गुरु नानक देव जी के मुख्य तीन

उपदेश हैं जिनके अनुसार जीवन बना कर समूची मानवता का कल्याण सम्भव है। ये उपदेश हैं–

1. किरत करो अर्थात् मेहनत की कमाई।
2. नाम जपो अर्थात् एक ईश्वर की आराधना।
3. दंड छबी अर्थात् मिल बाँट कर खाओ।

गुरु नानक देव जी ने समूची मानवता का पथ-प्रदर्शन किया। गुरु नानक जी के आगमन काल में शासकों की अदूरदर्शिता, धर्मान्धता, स्वेच्छाचारिता के फलस्वरूप भारतीय समाज में अशान्ति, अन्याय एवं अत्याचार व्यापक रूप से विद्यमान था। रुढ़िग्रस्त एवं दिग्भ्रमित मानवता को सही मार्ग पर लाने हेतु तथा सामाजिक अन्याय को समाप्त कर आदर्श समाज की कल्पना को साकार करने हेतु समस्त आडम्बरों एवं कुरीतियों के खिलाफ गुरु जी ने रणभेरी बजा दी। गुरु साहिब का विरोध किसी धर्म या जाति विशेष से नहीं था अपितु उनके उपदेश तो समस्त धर्मों के लिए समान थे। इसलिए तो जब उनसे पूछा गया आप की दृष्टि में हिन्दू बड़ा है अथवा मुसलमान तो गुरु साहिब का कितना सटीक जवाब था कि शुभ कर्मों के बिना दोनों ही पछताऐंगे। यथा–

बाबा आखे हाजियां
शुभ अमला बाझो दोनों रोई।

इसी प्रकार मेहनत की कमाई के बिना दूसरे का हक छीनने को पाप कर्म बताते हुए गुरु साहिब ने समझाया–

हक पराया नानका
उस सुअर उस गाय।
गुर पीर हामा ता भरे
जो मुरदार न खाय। (पन्ना-141)

गुरु नानक देव जी के समय हिन्दुओं और मुसलमानों में निम्न वर्ग के लोगों को शूद्र समझा जाता था उनकी दशा बहुत बुरी थी। उन्होंने बराबरी और समाजवादी नारा दिया। उनका दृढ़ विश्वास था कि जहाँ नीच समझे जाने वाले लोगों के साथ प्यार का व्यवहार होता है वहीं ईश्वर की कृपा बरसती है। गुरु नानक देव जी ने निम्न स्तर वालों को अपना माना और डंके की चोट पर कहा –

नीचा अंदरि नीच जाति
नीची हूँ अति नीच।
नानकु तिन के संगि साथि
वडिया सिंह किआ रीस।।
जिथै, नीच समालीअनि
तिथै: नदरि तेरी बखसीस।।
(पन्ना-15)

यही नहीं गुरु नानक देव जी के समय में नारी जाति की स्थिति भी दयनीय थी। स्त्री घर की चारदीवारी में बंद थी उन्हें पुरुष के समान दर्जा प्राप्त नहीं था उसे धार्मिक कृत्यों में शामिल होने तथा धर्मग्रन्थ पढ़ने की भी अनुमति नहीं थी। स्त्री जाति का अपमान एवं करुणामयी दशा देखकर गुरु साहिब ने स्त्री जाति का उद्धार करने का निर्णय लिया। और उसके हक में बुलंद नारा दिया–

सो किउ मंदा आखीऐ
जितु जमहि राजान।।
(पन्ना - 473)

अर्थात् पीरों-पैगम्बरों, राजाओं-महाराजाओं की जननी को आप निम्न कैसे कह सकते हो।

समूची मानवता को ईश्वर की सन्तान मानने वाले गुरु साहिब ने लंगर की परम्परा चलाई जिसमें राजा-रंक, अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष, छोटा-बड़ा सभी वर्गों के लोग एक साथ एक ही पंक्ति में बैठ कर भोजन ग्रहण करते थे। उनकी समन्वय भावना का अनूठा उदाहरण है।

गुरु नानक देव जी ने उस प्रभु के निर्गुण एवं सगुण स्वरूप का भी सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया। 'आरती' शीर्षक से रची उनकी वाणी जिनसे अभिभूत हो गुरुदेव रविन्द्र नाथ ठाकुर जी ने इस वाणी को 'विश्व-गान' की संज्ञा से अलंकृत कर गुरु नानक देव जी के प्रति अपनी असीम श्रद्धा व्यक्त की। यह वाणी इस प्रकार है –

गगन में थाल रवि चंद दीपक बने
तारिका मंडल जनलक, मोती।।
सम महि जोति जोति है सोइ
तिसदे चाणन सम महि
चानण होइ।।
(पन्ना-663)

वास्तव में गुरु नानक देव जी की पावन वाणी एवं संदेश गृहस्थ जीवन में रहते हुए प्रभु भक्ति में लीन होकर शुभ एवं नेक कर्म करते हुए इसी धरती को स्वर्ग में रूपान्तरित करने का सहज मार्ग बतलाती है। इसके लिए शरीर को कष्ट देने या कठोर साधना एवं जप-तप की आवश्यकता नहीं है। गुरु नानक देव जी समूची मानवता के पथ प्रदर्शक एवं साझे गुरु थे। उनकी वाणी शांति, प्रेम, मातृत्व भावना, धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय एकता की समर्थक है। अत: वर्तमान में अत्यधिक प्रासंगिक है। ❑

गुरु नानक देव जी की पावन वाणी एवं संदेश गृहस्थ जीवन में रहते हुए प्रभु भक्ति में लीन होकर शुभ एवं नेक कर्म करते हुए इसी धरती को स्वर्ग में रूपान्तरित करने का सहज मार्ग बतलाती है। इसके लिए शरीर को कष्ट देने या कठोर साधना एवं जप-तप की आवश्यकता नहीं है। गुरु नानक देव जी समूची मानवता के पथ प्रदर्शक एवं साझे गुरु थे। उनकी वाणी शांति, प्रेम, मातृत्व भावना, धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय एकता की समर्थक है।

जन्म शताब्दी शृंखला भाग -1

ब्रह्मलीन दत्तात्रेय बापूराव ठेंगड़ी उपाख्य दत्तोपंत जी ठेंगड़ी जो 1942 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के, परम पूज्य श्री गुरुजी की सत्प्रेरणा से प्रचारक बने वे एक विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न निष्काम योगी थे। भारतीय मजदूर संघ, किसान संघ व स्वदेशी जागरण जैसे कई नवीन राष्ट्रीय संगठनों का गठन किया, अनेक देशों की यात्राएँ की, कई मौलिक चिन्तन आधारित पुस्तकों का लेखन किया और दो कार्यकाल तक राज्य सभा में एक यशस्वी सदस्य के रूप में पूरे किये। राज्य सभा में अत्यन्त प्रखर भूमिका निर्वाह के उपरान्त भी संगठन के प्रति उच्च निष्ठापूर्वक राजनीति से निस्पृह रहते हुये जीवन में संगठन कार्य को ही प्राथमिकता दी। उसके परवर्ती काल में बिना किसी औपचारिक पद को धारित किये संगठन में शीर्षस्थ सम्मान के साथ, संघ व विविध कार्यों के निमित्त कार्यकर्ताओं का आजन्म मार्गदर्शन किया। ऐसे राष्ट्र-ऋषि का इस 10 नवम्बर, 2019 से आरम्भ हुआ यह शताब्दी वर्ष है। इस अवसर पर बारह अंशों में उनकी प्रेरक जीवनी प्रस्तुत की जा रही है। इस प्रथम अंश में उनके बाल्यकाल से प्रचारक जीवन में प्रवेश तक का वृत्त प्रस्तुत किया जा रहा है - लेखक

श्रद्धेय ठेंगड़ी जी एक युगदृष्टा व विलक्षण संगठन शिल्पी

प्रो. भगवती प्रकाश
कुलपति
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय,
ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश

ब्रह्मलीन श्रद्धेय दत्तोपन्त जी ठेंगड़ी की जो देश, समाज व मानवता के प्रति समर्पित सात दशक की राष्ट्र-साधना रही है वह हम सभी के लिए एक अजस्र प्रेरणा का स्रोत है। दत्तात्रेय बापूराव ठेंगड़ी उपाख्य दत्तोपन्त ठेंगड़ी जी ने अपने 84 वर्ष के जीवन में 62 वर्ष के राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक-जीवन में जो संगठन साधना की है, उसे उस राष्ट्र ऋषि का कठोर तप ही कहा जा सकता है। 10 नवम्बर, 1920 को दीपावली के शुभ अवसर पर महाराष्ट्र के वर्धा जिले के आर्वी नगर में जन्मे दत्तोपन्त जी, 1931-32 में जब सातवीं कक्षा में अध्ययनरत् थे, तब से ही वे स्वधीनता आन्दोलन की स्थानीय 'वानर सेना' व आर्वी विद्यार्थी संघ में सक्रिय हो गये थे। अपनी 22 वर्ष की आयु पूरी करने के पूर्व ही, 1942 में वे राष्ट्र की सेवार्थ घर-परिवार त्याग कर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक बन गये थे। अपने 62 वर्ष के प्रचारक जीवन में 34 देशों की यात्रा, दो कार्यकाल राज्य सभा में पूरे करने के साथ ही 48 पुस्तक-पुस्तिकाओं का लेखन और भारतीय मजदूर संघ, किसान संघ व स्वदेशी जागरण मंच सहित कई संगठनों के गठन जैसी अनेक उपलब्धियों का श्रेय उनको जाता है।

दत्तोपन्त जी के पिता श्री बापूराव दाजीबा ठेंगड़ी आर्वी नगर के प्रतिष्ठित अधिवक्ता थे। उनकी माताजी सौ. जानकी बाई भगवान दत्तात्रेय की उपासक थीं। उनकी माताजी का यह दृढ़ विश्वास था और इसका उन्हें पूर्वाभास भी होता था कि, दत्तू का (ठेंगड़ी जी का बचपन का घर का नाम) जन्म देश कार्य के लिए हुआ है। दत्तोपन्त जी के जन्म के पूर्व उनकी सभी सन्तानों की मृत्यु हो जाने के बाद दत्तोपन्त जी जीवित रहे, इसे वे भगवान दत्तात्रेय की कृपा मानती थीं। उन्होंने इनके जीवित रहने पर, उन्हें समाज कार्य या भगवान दत्तात्रेय के काम में समर्पित करने का मनौती भी कर ली थी। इसीलिये उनका नाम भी दत्तात्रेय ही रखा था। दत्तोपन्त जब 1935-36 में आठवीं

कक्षा के छात्र थे तब से ही वह उन्हें संघ की शाखा पर जाने के लिये भी प्रेरित करती थीं। श्रद्धेय दत्तोपन्त जी की प्रारंभिक शिक्षा आर्वी नगर स्थित म्युनिसिपल स्कूल में हुई थी। अपनी कक्षा में, दत्तोपन्त सदैव सहपाठियों से आगे रहते थे। उनकी स्मरणशक्ति अद्भुत थी, एक बार पढ़ लेने पर उन्हें कण्ठस्थ हो जाता था। वे एक अध्ययनशील, मेधावी और प्रतिभाशाली विद्यार्थी थे। इसके अतिरिक्त किशोरवय से ही उनमें संगठनकर्ता का गुण भी था। स्वतंत्रता आंदोलन के उस दौर में स्वाधीनता के लिए आर्वी में भी जो सत्याग्रह व चौराहों पर कार्यक्रम होते थे उनमें वे बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। इसलिये स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय किशोरों की वानर सेना, निर्धन छात्र समिति, झुग्गी-झोंपड़ी मण्डल एवं आर्वी विद्यार्थी संघ में वे सक्रिय भागीदारी करने लगे थे। अपनी 15-18 वर्ष की आयु में ही वे कई संगठनों का नेतृत्व करने लग गये थे। यथा:

1. अध्यक्ष : वानर सेना आर्वी तालुका कमेटी (1935)
2. अध्यक्ष : म्युनिसिपल हाईस्कूल, आर्वी विद्यार्थी संघ (1935-36)
3. सचिव : म्युनिसिपल हाईस्कूल, गरीब छात्र फंड समिति (1935-36)
4. संगठक : आर्वी गोवारी झुग्गी झोंपड़ी मंडल (1936)
5. प्रोबेशनर : हिन्दुस्तान समाजवादी रिपब्लिकन सेना, नागपुर (1936-38) आर्वी स्थित विक्टोरिया लाइब्रेरी (अब लोकमान्य तिलक वाचनालय) मुम्बई-पुणे के बाद महाराष्ट्र के तीसरे बड़े पुस्तकालय की दस हजार पुस्तकों में से दत्तोपंत जी ग्यारहवीं कक्षा तक ही हजारों पुस्तको का अध्ययन कर चुके थे।

कबड्डी खेलना व्यायाम व कुश्ती का भी उन्हें शौक था। प्रात: काल अखाड़ा जाना, कुश्ती व्यायाम करना, सायंकाल संघ स्थान पर खो-खो, कबड्डी खेलना। गर्मियों में तैरने का अभ्यास करना उनकी साधारण दिनचर्या थी।

महाविद्यालयीन शिक्षा के लिए वे नागपुर आये थे और श्री गुरुजी के यहाँ पर ही उनका निवास रहा। आर्वी से ही संघ कार्य के प्रति लगाव और प.पू. श्री गुरुजी के निकट सम्पर्क के परिणाम स्वरूप ही दत्तोपंत जी का प्रचारक बनना सम्भव हो गया था। लेकिन, उनके पिताजी की अनुमति लेना आसान नहीं था। इसके लिए युक्ति-पूर्वक आर्वी में विजया दशमी के उत्सव में जहाँ उनके पिताजी श्री बापूराव भी उस कार्यक्रम में पूर्ण गणवेश में उपस्थित थे। वहाँ कार्यक्रम समापन (शाखा विकिर) के पश्चात् आर्वी तालुका के मा. संघचालक तथा दत्तोपंत के संघकार्य के प्रेरणास्रोत डॉ. अण्णा साहेब देशपांडे जी ने सूचना दी कि अपने आर्वी नगर के प्रसिद्ध अधिवक्ता श्री बापूराव जी ठेंगड़ी के सुपुत्र दत्तात्रेय ठेंगड़ी अपनी वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं। वे अब केरल में संघ प्रचारक के रूप में जा रहे हैं।

दत्तोपन्त जी के जन्म के पूर्व उनकी सभी सन्तानों की मृत्यु हो जाने के बाद दत्तोपन्त जी जीवित रहे, इसे वे भगवान दत्तात्रेय की कृपा मानती थीं। उन्होंने इनके जीवित रहने पर, उन्हें समाज कार्य या भगवान दत्तात्रेय के काम में समर्पित करने का मनौति भी कर ली थी। इसीलिये उनका नाम भी दत्तात्रेय ही रखा था।

इससे बापूराव पर मानो वज्रपात सा हुआ। इसे वे सहन नहीं कर पाये। उन्होंने घर आ कर प्रचारक भेजने से अपनी पत्नी से स्पष्ट मना कर दिया। माताजी जानकीबाई ने समझाया कि 'दत्तू का तो जन्म ही देश कार्य के लिए हुआ है। बापूजी पर कोई असर नहीं हुआ। तब नागपुर से वहाँ के कार्यालय प्रमुख श्री कृष्णराव जी मोहरीर आये व उन्हें समझाया कि उसने अपने जीवन का ध्येय उन्होंने निश्चित कर रखा है, फिर आप उन्हें आशीर्वाद देकर क्यों नहीं विदा करते। घण्टा भर काफी प्रश्नोत्तर के बाद कृष्णराव जी ने कहा कि आप दत्त-भक्त हैं। आपका यह बुद्धिमान पुत्र भगवान् दत्त का प्रसाद है, आपने उसका नाम भी दत्त रखा है और लोक-सेवा ही भगवान दत्तात्रेय का कार्य है। आपके घर में यह साक्षात् दत्त भगवान का ही प्रसाद है। अन्तत: बापूजी सहमत हुये। उन्होंने अपनी पत्नी से कहा और गाँव के सभी लोगों का भोज भी किया। दत्तोपन्त जी की माताजी को अतीव प्रसन्नता हुई। तब कृष्णराव जी ने नागपुर जाकर प.पू. श्री गुरुजी को यह सफलता का समाचार निवेदित किया। पन्द्रह दिन बाद बापूजी व बाई (उनकी पत्नी) नागपुर। श्री गुरुजी से मिले। श्रीगुरुजी के गले में माला पहनाई व श्रीफल (नारियल) देकर कहा 'मुझे भगवान् का साक्षात्कार हुआ। अब मेरा बच्चा आपके अधीन है, वह अब आपका कार्य करेगा।' दिनाँक 22 मार्च 1942 के दिन श्री दत्तोपन्त ठेंगड़ी संघ प्रचारक बन कर केरल के लिए रवाना हो गए। इस प्रकार इस दिन राष्ट्र को एक महान प्रचारक मिला। उन्होंने पूरे 62 वर्ष अर्थात् 2004 पर्यन्त राष्ट्र साधना में स्वयं को समर्पित कर दिया। ❑

अनूठी पहल

बेजोड़ है प्राथमिक शिक्षा का बलिया मॉडल

मजदूर परिवारों के बच्चे पा रहे कान्वेंट स्कूल जैसी शिक्षा

❑ सुधीर तिवारी, बलिया

नो बैग डे, स्पोर्ट्स ड्रेस, टीचर-पैरेंट्स मीटिंग और डायनिंग हॉल जैसी सुविधाओं व व्यवस्थाओं की किसी सरकारी स्कूल से अपेक्षा नहीं की जा सकती है। यह तो कान्वेंट कल्चर का मसला मान लिया जाता है। इसके उलट उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में एक प्राथमिक विद्यालय की सुविधाएँ एक बारगी कान्वेंट स्कूल से भी बेहतर दिखती हैं।

हर छात्र की बनी हुई डायरी

प्रधानाध्यापक उमेश सिंह के प्रयासों से बलिया जिले के नवीन प्राथमिक विद्यालय करमपुर में बुनियादी शिक्षा का ऐसा वातावरण बना, जो दूसरों के लिए आदर्श है। कुछ नया करने की सोच का ही परिणाम है कि छोटा कैंपस, कम संसाधन, महज दो अध्यापक और एक शिक्षामित्र होने के बावजूद विद्यालय की पठन-पाठन व्यवस्था काफी बेहतर है। तभी तो लोग कान्वेंट की बजाय अपने बच्चों को इस सरकारी स्कूल में भेजते हैं। हर छात्र की डायरी बनी हुई है, जिसमें पूरे वर्ष का रिकॉर्ड रखा जाता है। क्लास वर्क की कापियां विद्यालय में ही रहती हैं। बच्चों के स्वास्थ्य जांच के लिए मेडिकल किट है। यहां बच्चे गैरहाजिर होना ही नहीं चाहते।

एलईडी स्क्रीन से पढ़ाई

विद्यालय के एक बड़े कमरे में बच्चे एक साथ बैठकर खेल-खेल में सीखते हैं। उसमें प्राथमिक शिक्षा से जुड़ी जानकारी को वॉल पेंटिंग कराई गई है, जिस पर बच्चे गणित, अंग्रेजी, हिंदी से जुड़े सवाल हल करते हैं। इसी से उनका कॉमन सेंस का अनुमान भी लगाया जाता है। उस हॉल में बड़ी एलईडी टीवी लगी है, जिस पर मनोरंजक चीजें दिखाकर सिखाया जाता है। बच्चों को कंप्यूटर व लैपटॉप का भी जरूरी ज्ञान है।

खेलकूद, योग और स्काउट ज्ञान पर ध्यान

विद्यालय में खेलकूद का भी अच्छा माहौल है। शतरंज में तो यहाँ के कुछ बच्चे अपनी उम्र के हिसाब से काफी बेहतर हो चुके हैं। चूंकि प्रधानाध्यापक उमेश सिंह का खेल से पुराना लगाव रहा है, लिहाजा खेल विधि से भी बच्चों के विकास में वह पीछे नहीं हटते। इसके अलावा योग, स्काउट ज्ञान के साथ स्वच्छता पर भी उनका विशेष ध्यान रहता है। स्वच्छता के विभिन्न आयामों की जानकारी बच्चों को है।

जमीन पर बैठकर नहीं करते भोजन

विद्यालय की खूबी यह भी है कि यहाँ नीचे बैठ कर बच्चे मिड-डे-मील नहीं लेते। उनके लिए बाकायदा एक अलग कमरे में भोजनालय बना है। उसमें सीमेंट की ही इस तरीके से बेंच बनी है कि एक-दूसरे की तरफ मुँह करके बच्चे खाना खा सकें। बेंच पर एक साथ भोजन कर रहे बच्चों के चेहरे पर भी एक अलग ही खुशी थी। इस बेंच का प्रयोग अभिभावकों संग होने वाली बैठकों में भी हो जाता है।

हर बुधवार व शनिवार को नो-बैग डे

विद्यालय में एक अलग पहल यह भी है कि यहाँ हर बुधवार व शनिवार को नो बैग डे होता है। प्रधानाध्यापक की पहल पर ही विद्यालय में बच्चों को स्पोर्ट्स ड्रेस भी दी गई है, जो नो बैग डे के दिन पहनकर आना होता है। खेल-खेल में सीखने की परंपरागत विधियाँ इस स्कूल को सबसे अलग बनाती हैं।

Education System Needs to be Strengthened

We have numerous policies for betterment of the education system, but their planning and processing of their implementation should be done in the right way, said Vice Chancellor of University of Mysore G. Hemantha Ku mar.

He was speaking during an interaction on National Education Policy-2019 organised by School of Law, University of Mysore, and Mysure Vishwavidyanilaya Shaikshika Sangh in Manasayangotri here on Wednesday...

He said, "There are three types of universities - Central, state and private. Central government funds the Central universities while the private universities get funds from various sources. Only state universities face the problem of funds. However, the parameters for ranking of universities and the competition are the same for all universities. which is unfair. State uni versities are not able to build necessaryinfrastructure with available funds."

MLC Arun Shahapur said. "Education is the last topic of discussion among the officials. We should have an equitable and vibrant educational society, which will automatically reduce the economical. social and cultural problems. Education should improve one's sense of mathematics and literacy. There are schools which receive fees up to Rs 15 lacs and there are gaverment schools imparting free education. Such gap should decrease. Education should not become business."

Director of School of Law C Basavaraju said, “Many mono-faculty colleges and universities receive minimum grants while the private colleges get higher amounts of funding. There is no balance. A university is only recognised by its research, so cvery university should get equal opportunities to get recognition. The policy is necessary as it can help in reducing the gaps between private and state universities. The policy will not only focus on quality education, but will help in the development of quality of life."

AJKLTF Demands redressal of issues of teaching fraternity

A Meeting of All Jammu Kashmir and Ladakh Teachers Federation, under the aegis of Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh which was held on 20 October 2019 under the chairmanship of Dev Raj Thakur, State President and Rattan Sharma, State General Secretary.

The main agenda of the meeting was to discuss the burning issues of the teaching fraternity, which include the non payment of salary of head teachers, their pending salaries for the months of Feb and March 2018 and also DA arrears/ Seventh Pay Commission arrears, non clearance of time bound promotion cases of Masters, improper updating of seniority list of PG teachers in various desciplinies and no DPC of teachers since long.

During the meeting, all the members said that the Masters working as Head Teachers in upper primary schools are not paid their salary regularly and informed that their salary for the months of February and March 2018 is still pending and also their DA/ seventh Pay Commission arrears are also not paid to them till date. Moreover all the Teachers working under NPS scheme also not paid their salary for the last two months, they said and alleged that the concerned authorities are not paying heed to their demands.

The feberation also alleged that the time bound promotion cases of Masters are also not being cleared by the authorities since long due to the reasons best known to the concerned authorities. "It is for the first time in the history of School Education Department that DPC of teachers as Masters is not held for the last more than five years. There is a provision in the rules for the conduct of DPC of every cadre twice a year but it a mockery towards the educated teaching fraternity", the meet said.

During the meeting, it was also said that the seniority lists of PG Masters/ Teachers in various disciplines were not updated properly because of non submission of service particulars by the concerned DDOs/ CEOs timely to the higher authorities.

Those who were present in the meeting, included Rattan Sharma, Pardeed Kumar Shiv Dev Singh, Manjeet Singh, Kartar chand, Radha Krishan, Darshan Bharti, Neeraj Sharma, Dr. Khem Ram and others.

शिक्षा निदेशालय पर विशाल धरना-प्रदर्शन

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) ने 14 अक्टूबर 2019 को बीकानेर शिक्षा निदेशालय के सामने प्रदेश से आए सैकड़ों कार्यकर्ताओं के साथ प्रदेशाध्यक्ष श्री सम्पत सिंह के नेतृत्व में एक विशाल धरने का आयोजन किया। संगठन के प्रदेश मन्त्री रवि आचार्य ने यह जानकारी दी।

धरने को सम्बोधित करते हुए प्रदेश संगठन मन्त्री प्रहलाद शर्मा ने बताया कि केन्द्र सरकार के अनुरूप राज्य सरकार ने भी राज्य कर्मचारियों के लिए नई पेंशन योजना लागू की है। यह योजना कर्मचारियों के पेंशन पाने के संवैधानिक अधिकार पर कुठाराघात साबित हो रही हैं।

प्रदेश अध्यक्ष सम्पत सिंह ने धरना स्थल पर अपने भाषण में समस्त प्रदेश धरनार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि माध्यमिक शिक्षा विभाग ने गत 29 सितम्बर 2019 को प्रदेश भर में प्रधानाचार्य, प्रधानाध्यापक एवं व्याख्याताओं के स्थानान्तरण किये हैं। इन स्थानान्तरण आदेशों में शिक्षा विभाग की अनेक स्थापित परम्पराओं और मान्यताओं को ध्वस्त करते हुए मनमाने तरीके से स्थानान्तरण आदेश जारी किये गये। साथ ही एक विचारधारा विशेष के नाम पर शिक्षकों को निशाना बनाया गया है।

संगठन ने माननीय राज्यपाल महोदय, मुख्यमंत्री महोदय एवं शिक्षा मंत्री महोदय से इस स्थानान्तरण घोटाले की व्यापक जांच करवाने और दोषियों को सजा देने का आग्रह करते हुए ज्ञापन भी दिये हैं। आज संगठन ने बीकानेर के निदेशालय के समक्ष धरना देकर अपनी आवाज को बुलन्द किया है जिससे शिक्षा विभाग सावधान हो जायें और इस प्रक्रिया को तत्काल रोक कर तथा भविष्य में इस घटना की पुनरावृति नहीं होने देने का संकल्प ज्ञापित कर शिक्षकों को भयमुक्त करने का कार्य करें।

प्रदेश महामंत्री अरविन्द व्यास ने धरने को संबोधित करते हुए बताया कि राज्य में सातवां वेतनमान लागू करते हुए संगठन ने मांग की थी कि पहले छठे वेतनमान में रही विसंगतियों को दूर करने के पश्चात् सातवाँ वेतनमान लागू किया जाये किन्तु राज्य सरकार ने उस समय जल्दबाजी में सातवाँ वेतनमान की सिफारिशें लागू कर दी तथा वेतनमान लागू करते समय एवं पूर्व में रही वेतन विसंगतियों के अध्ययन व निवारण के लिये सामन्त कमेटी का गठन किया तथा इस कमेटी की रिपोर्ट निश्चित समय अवधि में देने का भरोसा दिलाया था। किन्तु सरकार ने टालमटोल का रवैया अपनाया तथा इस कमेटी का कार्यकाल बढ़ाया जाता रहा।

अतिरिक्त महामंत्री महेन्द्र लखारा ने धरने को सम्बोधित करते हुए बताया कि यदि सरकार ने इन माँगों पर सकारात्मक रूख नहीं अपनाया तो संगठन को मजबूर होकर उग्र आंदोलन करने के लिये विवश होना पड़ेगा जिसके लिये राज्य सरकार स्वयं जिम्मेदार होगी।

प्रदेश मंत्री रवि आचार्य ने धरने के लिये प्रदेश भर से आये हुए शिक्षक प्रतिनिधियों का अभिनन्दन करते हुए यह विश्वास दिलाया कि शिक्षा निदेशालय बीकानेर में शिक्षकों के हितों के विपरीत होने वाले प्रत्येक कदम का पुरजोर विरोध किया जायेगा। शिक्षा निदेशालय में वर्तमान में चल रही काउंसलिंग प्रक्रिया पारदर्शिता के नाम पर एक धोखा है।

'नर सेवा नारायण सेवा' मध्य प्रदेश शिक्षक संघ की प्रेरक पहल

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ ने अपने स्थापना दिवस पर शिक्षकों द्वारा रेलवे स्टेशन करेली पर वहाँ अस्थाई रूप से रुके हुए असहाय गरीब वंचित वर्ग को खाद्य सामग्री के पैकेट का वितरण कर 'नर सेवा-नारायण सेवा' को चरितार्थ करते हुए सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन किया गया। मध्य प्रदेश शिक्षक संघ के जिला सचिव सत्यप्रकाश त्यागी के मुताबिक सनातन धर्म परंपरा का अनुसरण करते हुए गरीब और भूखे जनों को भोजन पैकेट देकर उनकी आत्म संतुष्टि के भाव के लिए संगठन द्वारा इस सनातन परंपरा का निर्वहन किया गया। इस अवसर पर अध्यापकों द्वारा बताया गया कि मप्र शिक्षक संघ राष्ट्रीय चरित्र से जुड़े समाज में अपने दिनचर्या और आचार विचार से मार्गदर्शन देने वाले लोगों का, राष्ट्रवादी सोच का देश समाज शिक्षा और शिक्षक हितैषी संगठन है। पाश्चात्य शैली के अनुसार कार्यक्रमों का आयोजन और उत्सव में धन को खर्च न कर उस धन का सदुपयोग करके भूखे पेटों तक अन्न जल की संतुष्टि पहुँचाने का प्रयास कर लोगों के बीच में अन्न और भोजन के अपव्यय को रोकने का संदेश पहुँचाने का प्रयास किया गया है। क्योंकि देखने में आता है सामूहिक भोज शादी समारोह में बफर डिनर के दौरान अत्यधिक मात्रा में भोजन प्लेटों में ही रह जाता है और वह अनावश्यक ही बर्बाद हो जाता है।

इसी तरह शादी विवाह में ज्यादा मात्रा में भोजन बनाने की परंपरा और रिवाज के कारण भी सौ पचास लोगों का अतिरिक्त भोजन सुबह मैदानों में फेंकते हुए देखा गया है इतने भोजन से सैंकड़ों परिवारों का पालन पोषण हो सकता है और किसानों के मेहनत पसीने से उगने वाले अन्न भोजन को बर्बाद होने से बचाने का संदेश जन-जन तक पहुँचाया जा रहा है। खाद्य दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में वितरण के समय शिक्षक संघ के पदाधिकारी उपाध्यक्ष श्रीभगवान उपाध्याय ब्लॉक अध्यक्ष राजेश ठाकुर सचिव तरवर साहू ने खाद्य सामग्री वितरण करते हुए कहा कि यदि हम समाज में समरसता स्थापित करने की भावना जाग्रत कर समान रूप से नीति नियमों का पालन करें तो फिर देश समाज को तोड़ने वालों के हौसले खुद ही पस्त हो जाएंगे। स्थापना दिवस के आयोजन में हेमलता त्यागी मधु शर्मा सहित अन्य स्नेहीजनों की भी मौजूदगी रही।

गतिविधि

'हम और हमारा विद्यालय' विषयक संगोष्ठी शिमला में सम्पन्न

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ द्वारा 'हम और हमारा विद्यालय' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला छोटा शिमला में 12 व 13 अक्टूबर 2019 को किया गया। उद्घाटन सत्र में उच्च शिक्षा विभाग के शिक्षा निदेशक डॉ. अमरजीत शर्मा उपस्थित रहे। इनके अलावा विशिष्ठ अतिथि के रूप में उत्तर क्षेत्र प्रमुख श्री जगदीश कौशिक उत्तर मध्य क्षेत्र प्रमुख श्री जगदीश चौहान अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संयुक्त मंत्री श्री पवन मिश्रा विशेष रूप से उपस्थित रहे। इस सत्र की अध्यक्षता प्रांत अध्यक्ष श्री पवन कुमार ने की। श्री जगदीश चौहान ने इस सत्र में संगठन परिचय प्रस्तुत किया। उन्होंने संगठन का स्वरूप, संगठन का ध्येय वाक्य, संगठन के विस्तार की विस्तृत चर्चा सदन में रखी।

शिक्षा निदेशक उच्च शिक्षा डॉ. अमरजीत शर्मा ने हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ की इस इस प्रयास की बहुत प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि आज प्रदेश शिक्षक महासंघ के इस प्रयास से शिक्षा का उत्थान होगा तथा गुणवत्ता को भी प्रोत्साहन मिलेगा।

दूसरे सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में श्री आशीष गोली रहे। जो वर्तमान में समग्र शिक्षा राज्य परियोजना अधिकारी हैं। सत्र की अध्यक्षता मोहनलाल आजाद जी सेवानिवृत्त अतिरिक्त शिक्षा निदेशक जी ने की। सत्र में तीन शोधकर्ताओं ने अपना शोध प्रस्तुत किया। तृतीय सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में मंत्री चांदला एसडीएम शिमला रही इस सत्र में चार शोधकर्ताओं ने अपने शोध पत्र प्रस्तुत किए। श्रीमती चांदना ने भी अपने विद्यालय जीवन के अनुभव साझा किए। चौथे सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में श्री जमवाल एसपी शिमला रहे तथा इस सत्र में भी चार शोधकर्ताओं ने अपने शोध पत्र प्रस्तुत किए। जमवाल जी ने बच्चों को नशे से दूर रखने के लिए शिक्षकों के योगदान पर चर्चा की। पांचवें सत्र में मुख्य अतिथि के श्री महिधर प्रचारक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ रहे। इस सत्र की अध्यक्षता श्री जगदीश कौशिक ने की। और उन्होंने उपस्थित कार्यकर्ताओं से हम और हमारा विद्यालय पर अपने विचार साझा किए और इस सत्र में भी दो शोधकर्ताओं ने अपने शोध पत्र प्रस्तुत किए। छठे सत्र में मुख्य अतिथि श्रीमती सोनिया ठाकुर संयुक्त उच्च शिक्षा निदेशक रहे। इस सत्र में चार शोधकर्ताओं ने अपने शोध पत्र प्रस्तुत किए। उन्होंने कहा कि मैं भी पूर्व में शिक्षक रही हूँ और किसी शिक्षक संगठन द्वारा ऐसा प्रयास देखकर आज मन बहुत प्रसन्न है। मुझे लगता है ऐसे प्रयासों से शिक्षा का उत्थान अवश्य होगा। समापन सत्र में मुख्य अतिथि प्रधान सचिव हिमाचल प्रदेश श्री के.के. पंत उपस्थित रहे। श्री पवन कुमार प्रांत अध्यक्ष ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में हम और हमारा विद्यालय विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने स्पष्ट किया कि हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ हम और हमारा विद्यालय विषय पर किस तरह की विषय वस्तु चाहता है। श्री के.के. पंत ने अपने अपने उद्बोधन में हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ के इस प्रयास को बहुत सराहा। जब कोई शिक्षक संगठन इस तरह के कार्यक्रमों का आयोजन करेगा तो ही समाज में बदलाव आएगा और शिक्षा का उत्थान होगा। उन्होंने हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ के द्वारा चलाए जा रहे प्रेरक कार्यों की सराहना की।

रुक्टा (राष्ट्रीय) की प्रदेश कार्यकारिणी बैठक जयपुर में संपन्न

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ राष्ट्रीय की प्रदेश कार्यकारिणी बैठक 13 अक्टूबर 2019 को सेवा धाम जयपुर में संगठन के प्रदेश अध्यक्ष दिग्विजय सिंह शेखावत की अध्यक्षता में संपन्न हुई। सामूहिक सरस्वती वंदना के पश्चात महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने गत बैठक का कार्यवाही विवरण सदन के समक्ष रखा जिसे सर्वसम्मति से अनुमोदित किया गया। गत बैठक के पश्चात संगठन की शिक्षक समस्याओं के समाधान के संबंध में हुई गतिविधियों एवं उपलब्धियों का विस्तृत ब्यौरा सदन के समक्ष रखते हुए महामंत्री ने सांगठनिक और वैचारिक गतिविधियों के बारे में भी विस्तार से जानकारी दी। अगले सत्र में सदस्यों द्वारा शिक्षा एवं शिक्षकों की समस्याओं पर गंभीर चिंतन मंथन किया गया। सदस्यों ने नवाचार के नाम पर उच्च शिक्षा में कक्षा अध्यापन को समाप्त करने के षड्यंत्र का विरोध किया गया तथा वैचारिक विद्वेष के चलते संगठन के कार्यकर्ताओं के दूरस्थ स्थानांतरण एवं महाविद्यालय शिक्षा में भय, आतंक तथा भ्रष्टाचार के माहौल का राज्य सरकार द्वारा संरक्षण करने पर रोष जताया गया।

बैठक को संबोधित करते हुए अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल ने उच्च शिक्षा संवर्ग की समस्याओं को लेकर मानव संसाधन विकास मंत्री श्री रमेश पोखरियाल 'निशंक' से हुई भेंट वार्ता की विस्तृत जानकारी दी तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संबंध में महासंघ के सुझाव के औचित्य को समझाया।

इसके बाद वार्षिक सदस्यता का हिसाब-किताब पूरा किया गया तथा दिसंबर-जनवरी माह में प्रस्तावित प्रदेश अधिवेशन के लिए इकाई से प्रस्ताव आमंत्रित करने तथा स्थान, तिथि के बारे में अंतिम निर्णय लेने के लिए महामंत्री और अध्यक्ष को सदन ने अधिकृत किया।

अखिल भारतीय संगठन मंत्री महेंद्र जी कपूर अपने उद्बोधन में महेसाणा में आयोजित राष्ट्रीय अधिवेशन की विस्तार से जानकारी दी तथा महासंघ के आगामी कार्यक्रमों के बारे में बताया। उन्होंने आह्वान किया कि शिक्षक परिसर में बदलाव के वाहक बने तथा प्रत्येक विद्यार्थी को व्यक्तिगत रूप से गढ़ते हुए देशभक्त और संस्कारी पीढ़ी बनाने में अपना योगदान दें एवं संगठन कार्य में मन बड़ा करके धैर्यपूर्वक निरंतर चलते रहें।

अध्यक्षीय उद्बोधन देते हुए संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजय सिंह शेखावत ने पिछली कार्यकारिणी का धन्यवाद देते हुए नवीन कार्यकारिणी का स्वागत किया। उन्होंने कहा कि वर्तमान सरकार दुर्भावनापूर्वक कार्य कर रही है किंतु उच्च शिक्षा में हम रचनात्मक कार्य करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। अंत में गत बैठक के पश्चात परम तत्त्व में लीन शिक्षक साथियों की आत्मा की शांति के लिए 2 मिनट मौन रखकर प्रार्थना की गई तथा श्रद्धांजलि दी गई। सामूहिक कल्याण मंत्र के साथ बैठक संपन्न हुई। बैठक में विस्तृत कार्यकारिणी के कुल 71 सदस्य उपस्थित रहे।